

योगविद्या

वर्ष 13 अंक 11
नवम्बर 2024



बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत



हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारीयों प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर,
811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।
थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद,
121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2024

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्य : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 (कवर पृष्ठों सहित)

कवर एवं अन्दर के प्लेट: योगविद्या प्रशिक्षण



आध्यात्मिक मार्गदर्शन

यदि आप आधुनिक शिक्षा-पद्धति की तुलना प्राचीन गुरुकुल पद्धति से करें तो दोनों के बीच बहुत बड़ा अन्तर पाएँगे। आधुनिक विश्वविद्यालयों की तथाकथित धर्मनिरपेक्ष शिक्षा एवं ऋषियों की आध्यात्मिक शिक्षा की भिन्नता पर ध्यान दीजिए।

गुरुकुल के प्रत्येक विद्यार्थी को योग, आसन, प्राणायाम, मंत्र, नैतिक संहिता, गीता, रामायण, महाभारत एवं उपनिषदों का ज्ञान होता था। प्रत्येक विद्यार्थी नम्रता, आत्म-संयम, आज्ञा-पालन, सेवा-भाव, आत्म-त्याग, सद्व्यवहार, शिष्टता एवं भद्र स्वभाव जैसे गुणों से युक्त होता था। साथ ही सभी विद्यार्थी आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की प्रबल इच्छा से युक्त होते थे। गुरुकुल का प्रत्येक विद्यार्थी निर्दोष, निर्मल एवं पवित्र होता था। उसे पूर्ण नैतिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। प्राचीन संस्कृति की यह प्रमुख विशेषता थी।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित

मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथूरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा

स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 13 अंक 11 नवम्बर 2024
(प्रकाशन का 62 वाँ वर्ष)

विषय सूची

- 4 राजयोग की उपयोगिता
- 12 ध्यान के सोपान
- 18 योग का विकास क्रम
- 26 झारखण्ड
- 32 वकील की पगड़ी
- 34 संयुक्त राज्य अमेरिका
- 35 अफ्रीका
- 36 अध्यात्म का व्यावहारिक रूप
- 42 तमिलनाडु – सपने साकार हुए
- 44 ज्ञानयोग की सप्त भूमिकाएँ
- 53 उत्तर प्रदेश

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

राजयोग की उपयोगिता

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जीवन के रहस्यों के बारे में गहन चिन्तन, अन्तिम सत्य को जानने-समझने की तीव्र उत्कण्ठा तथा उसे प्राप्त करने की व्यावहारिक युक्तियों का विकास, यह भारतवर्ष की प्राचीन संस्कृति का केन्द्र बिन्दु रहा है। सत्य का अन्वेषण, 'दर्शन' के नाम से तथा उसे प्राप्त करने का मार्ग, 'योग साधना' के नाम से जाना गया और यह भारत का विश्व के लिए मुख्य योगदान है। योग साधना मानव को उसके दैनिक जीवन की सीमाओं और पीड़ाओं से उबारकर, जीवन का सम्पूर्ण आनन्द उपलब्ध कराती है और जीवन लक्ष्य के करीब ले जाती है। योग वह अचूक युक्ति है जो मानव को अपने शरीर, मन तथा अन्त में सम्पूर्ण प्रकृति पर विजय प्राप्त कराती है।

योग विद्या पुरातन काल से हमारी विरासत रही है। इसका उल्लेख वेदों, उपनिषदों और पुराणों में मिलता है। रामचरितमानस तथा योगवाशिष्ठ में योगी काकभुशुंडीजी का उल्लेख मिलता है, जो संयम एवं योग में सिद्धि के कारण युग-युगान्तर तक विद्यमान रहे हैं। उनका उदाहरण इस तथ्य को उजागर करता है कि किस प्रकार योगाभ्यास द्वारा योगी दिक्काल की सीमाओं को लांघ जाता है। सत्य की अनुभूति कैसे प्राप्त कर सकते हैं, इस बात का स्पष्ट उल्लेख महाभारत के अन्तर्गत भगवद्गीता के सात सौ श्लोकों में भी किया गया है।

सांख्य और योग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सांख्य और योग की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि एक ही है। सांख्य दार्शनिक विश्लेषण और वर्गीकरण पर जोर देता है, जबकि योग उन्हीं सिद्धान्तों का व्यावहारिक पक्ष है। सांख्य और योग का सांकेतिक उल्लेख ऋग्वेद में भी मिलता है, जिसमें ईश्वर द्वारा पदार्थ से सृष्टि के निर्माण की चर्चा आई है। नासदीय सूक्त में भी एक अंधकारमय अवस्था की चर्चा आती है, जिसमें सृष्टि का बीज निहित था। अन्ततः ऋग्वेद जगत् और ईश्वर, दोनों में किसी मौलिक अन्तर को नहीं मानता, उसके अनुसार समस्त ब्रह्माण्ड वस्तुतः परम पुरुष का शरीर है। इस प्रकार ऋग्वेद प्रकृति और पुरुष को परब्रह्म के ही दो आयाम मानता है।



सांख्य का सृष्टि-सृजन का दृष्टिकोण संभवतः कठोपनिषद् से विकसित हुआ है। कठोपनिषद् इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि पर नियंत्रण के माध्यम से योगाभ्यास की अनुशंसा करता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् सांख्य और योग को शाश्वत जीवन की उपलब्धि का माध्यम बताता है। इसके द्वितीय अध्याय में योग की युक्तियों का उल्लेख भी आया है। मुंडकोपनिषद् में यम-नियम का वर्णन किया गया है। प्रणव की धनुष से तथा आत्मा की तीर से तुलना कर इस उपनिषद् में ध्यान के अभ्यास का भी संकेत दिया गया है।

महाभारत के मोक्षधर्म प्रकरण में सांख्य और योग का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसमें कहा गया है कि सांख्य से बढ़कर अन्य कोई ज्ञान नहीं और योग से बढ़कर अन्य कोई प्रभावशाली युक्ति नहीं। ये दो अनादि पथ हैं। भीष्म पितामह ने धर्म, तपस्या, उपवास आदि पर प्रकाश डालते हुए उन्हें योग का

सहायक बतलाया है, साथ ही उन्होंने ध्यानयोग की विशद् चर्चा भी की है। 'अणु गीता' में भी सांख्य के पुरुष-प्रकृति विभेद एवं ध्यानयोग की चर्चा आई है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित सांख्य और योग से तो लोग भली-भाँति परिचित हैं ही। कुल मिलाकर महाभारत में सांख्य और योग की इतनी विस्तृत चर्चा है कि उसका समूचा उल्लेख कर पाना सम्भव नहीं। योगवाशिष्ठ में भी योग की विभिन्न युक्तियों तथा अभ्यासों की बात कही गई है। उद्दालक और काकभुशुंडी की कथाओं में प्राणों के नियंत्रण के माध्यम से ध्यानयोग का वर्णन है। बलि की कथा में निर्विकल्प समाधि की उपलब्धि की बात कही गई है।

वेदान्त भी योग के व्यावहारिक पक्ष को स्वीकारता है। हम यह भी कह सकते हैं कि वेदान्त सांख्य का ही परिष्कृत रूप है। बौद्ध धर्म भी योग की विधियों को मानता है। स्वयं बुद्ध ने भी योग के दोनों पक्षों, तपश्चर्या और ध्यान की साधना को अपनाया था। बौद्ध ग्रंथों में मन को पवित्र एवं एकाग्र करने के अभ्यासों की अनुशंसा की गई है। बौद्धों की योगाचार प्रणाली का नाम भी इसलिए पड़ा कि योग उसका प्रमुख अंग है।

कहा गया है कि शास्त्रीय योग के प्रतिपादक स्वयं हिरण्यगर्भ ही थे। लेकिन महर्षि पतंजलि ने सर्वप्रथम योग को अष्टांग योग अथवा राजयोग के नाम से व्यवस्थित किया। शास्त्रीय दर्शन प्रणालियों के अंतर्गत इसे षड्दर्शन में रखा गया है। व्यासजी ने पातंजल योग सूत्रों की व्याख्या की है और वाचस्पति मिश्र तथा विज्ञानभिक्षु, दोनों ने इस व्याख्या को आगे बढ़ाया है।

योग का दर्शन

सांख्य दर्शन के प्रति निष्ठा रखते हुए योग मानता है कि इस सृष्टि में दो मूल तत्त्व हैं, एक तो शाश्वत, सर्वव्यापी, जड़ प्रकृति और दूसरा सर्वव्यापी, चेतन पुरुष। इसके अलावा योग एक तीसरे तत्त्व, ईश्वर को भी स्वीकारता है। पुरुष और प्रकृति का संयोग ही प्रकृति की व्यापक अभिव्यक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है। प्रकृति के संपर्क में आने के कारण पुरुष को अपने अविवेक के फलस्वरूप लगता है कि वह एक पृथक् ईकाई है।

योग का उद्देश्य पुरुष को इस बंधन से मुक्त करना है। इस तरह योग मात्र दार्शनिक तर्क-वितर्क न होकर, मोक्ष-प्राप्ति का एक ठोस, व्यावहारिक मार्ग है। एक दर्शन के रूप में योग को स-ईश्वर सांख्य कहा जाता है, जिसका तात्पर्य यह है कि वह सांख्य के पच्चीस तत्त्वों के साथ एक ईश्वर तत्त्व को

भी जोड़ देता है। इस रूप में योग व्यावहारिक साधना होने की कसौटी पर खरा उतरता है। अविवेक के कोहरे से ढका पुरुष कल्पना करता है कि वह अपूर्ण है तथा प्रकृति के साथ संयोग द्वारा ही वह पूर्णता प्राप्त कर सकता है। इसलिए वह प्रकृति की ओर निहारता है, और उसकी चेतना के प्रकाश से आलोकित हुई जड़ प्रकृति अपना मायावी नृत्य शुरू करती है। प्रकृति-संयोग के परिणामस्वरूप, पुरुष प्रकृति-जनित मायावी वस्तुओं का अनुभव और उपभोग करने की इच्छा प्रदर्शित करने लगता है। अब पुरुष पूर्ण रूप से बंधन में आ जाता है, यद्यपि यह बंधन उसका वास्तविक स्वरूप नहीं है, पर इससे जन्म-मरण का अन्तहीन चक्र प्रारम्भ हो जाता है और यह चक्र अविवेक एवं उसके प्रभावों के कारण ही चलता रहता है। योग अपनी विशिष्ट वैज्ञानिक प्रक्रिया द्वारा इस बंधन की तीनों ग्रन्थियों को काटकर साधक को कैवल्य मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। कैवल्य की उपलब्धि और कुछ नहीं, बल्कि पुरुष की अपनी वास्तविक, प्रकृति रहित स्थिति का बोध है।

प्रत्येक व्यक्ति के भीतर एक सर्वशक्तिमान्, परम पुरुष के प्रति आस्था प्रच्छन्न रूप से विद्यमान रहती है, जिसकी ओर व्यक्ति सहायता तथा प्रेरणा हेतु उन्मुख होता है। अहंकार का, जिसके बंधन से मुक्ति ही पुरुष को प्रकृति की पकड़ से मुक्त कर सकती है, निर्मूलन मात्र बौद्धिक विश्लेषण द्वारा नहीं किया जा सकता। लेकिन जब इसे आत्म-समर्पण के भाव से उस परम तत्त्व ईश्वर के समक्ष अर्पित किया जाता है तब इस अहंकार को पुरुष से पृथक् करना सरल हो जाता है। इसे ही ईश्वर-प्रणिधान कहते हैं। यही योग की सैद्धान्तिक परिकल्पना है, जिसके साथ-साथ वह व्यक्तिगत साधना के मार्ग को अपनाने की भी अनुशंसा करता है।

अष्टांग योग

महर्षि पतंजलि के योग को प्रायः अष्टांग योग के नाम से जाना जाता है। इन आठ सोपानों के नियमित अभ्यास द्वारा स्वतंत्रता एवं मुक्ति की उपलब्धि होती है। ये आठ अंग हैं – यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य), नियम (शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर-प्रणिधान), आसन (ध्यान की सिद्धि के लिए आवश्यक शारीरिक भंगिमाएँ), प्राणायाम (प्राण शक्ति का समायोजन), प्रत्याहार (मन का विषयों से निवर्तन), धारणा (एकाग्रता), ध्यान और समाधि।



उपर्युक्त आठ अंग अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से व्यवस्थित किये गये हैं। योग साधना के ये सोपान साधक को मानवता से दिव्यता की मंजिल तक पहुँचाते हैं। सभी बंधन एक के बाद एक टूटते जाते हैं और अन्ततः पुरुष कैवल्य मोक्ष, अर्थात् पूर्ण स्वतंत्रता का अनुभव करता है। यही राजयोग का लक्ष्य है।

यम तथा नियम व्यक्ति के कर्मों को पवित्र और सात्त्विक बनाते हैं। यम-नियमों के पालन द्वारा तमस् और रजस् की, जो समस्त सांसारिक प्रपंच के आधार हैं, पकड़ ढीली होती है और आंतरिक शुचिता में वृद्धि होती है। आसनों के अभ्यास से राजसिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण प्राप्त होता है। आसन अंतरंग साधना के आधार हैं। प्राणायाम के अभ्यास से साधक को जीवनी-शक्ति का अनुभव एवं उस पर नियंत्रण प्राप्त होता है। उसे धीरे-धीरे यह बोध होने लगता है कि इच्छा ही जीवनी-शक्ति का आधार है। इच्छा ही मन को बहिर्मुखी बनाती है, यही वृत्तियों का आधार भी है। वृत्तियाँ मिलकर मन का निर्माण करती हैं और यही मन पुरुष को प्रकृति से जोड़ने वाली कड़ी है। हमारा मन अथवा चित्त ही प्रकृति की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति है। मनोनाश के लिए वृत्तियों का और वृत्तियों के नाश के लिए इच्छा का निर्मूलन आवश्यक है। इसके लिए साधक अपने मन की सभी बहिर्गामी किरणों को समेटने लगता है। यही प्रत्याहार कहलाता है।

मन का आधार खोजने के लिए सम्पूर्ण मन के प्रकाश की आवश्यकता पड़ती है। इसके साथ-ही-साथ मन के बाहर भागने की प्रवृत्ति पर रोक लगाकर, इच्छाओं के अनंत चक्र को भंग कर दिया जाता है। मन की यह घनीभूत प्रकाश-किरण अब मन के आधार पर केन्द्रित की जाती है और साधक धारणा में स्थापित होता है। चेतना का प्रवाह, जो अब तक बहिर्मुखी था, मुड़कर पुनः अपने स्रोत की ओर बहने लगता है और साधक ध्यान में प्रविष्ट होता है। इस अवस्था में प्रकृति से संपर्क भंग हो जाता है। पुरुष कैवल्य की भावातीत अवस्था में स्थिर हो जाता है, जिसे निर्विकल्प समाधि भी कहते हैं। इस अवस्था में अज्ञान समूल समाप्त हो जाता है। पुरुष को यह बोध हो जाता है कि वह उसकी अपनी चेतना ही थी जो प्रकृति को उसे मोहित करने तथा बन्धन में रखने की शक्ति दे रही थी। वह अपने वास्तविक स्वरूप का आनन्द अनुभव करता है और सदा उन्मुक्त एवं स्वतंत्र रहता है। निर्विकल्प समाधि की अवस्था में सारे विचार थम जाते हैं। इच्छा, वासना और संस्कार के सारे बीज दग्ध हो जाते हैं। इस सर्वोच्च अवस्था में योगी बाह्य चेतना से सारे संपर्क तोड़ देता है, द्वैत के भाव से मुक्त होता है, यहाँ तक कि 'मैं' की चेतना भी नहीं रह जाती। इस अवस्था को असम्प्रज्ञात समाधि भी कहा जाता है।

महर्षि पतंजलि की बंधन और मोक्ष की अवधारणा

महर्षि पतंजलि की बंधन की अवधारणा स्वयं में उतनी ही सटीक एवं वैज्ञानिक है जितनी उससे छुटकारे की युक्तियाँ। पुरुष, जो वास्तव में स्वतंत्र एवं अविभक्त है तथा प्रकृति की लीला का निर्लिप्त दर्शक मात्र है, प्रकृति से जुड़े होने की कल्पना करता है और ऐसा मानकर वह प्रकृति की लीला से आनन्द प्राप्त करता है। यही अविद्या है। एकत्व की गुणातीत अवस्था भंग होती है तथा 'मैं' और 'तुम' की समझ बढ़ती है। यही अस्मिता कहलाती है। अब पुरुष की चेतना का प्रवाह मन के माध्यम से बहिर्मुखी होता है। उसकी बुद्धि अनुभवों को सुखद एवं दुःखद की श्रेणियों में विभाजित करती है। इसी से राग और द्वेष की उत्पत्ति होती है। इनसे व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व की भावना और प्रबल होती है और वह एक पृथक् इकाई के रूप में अपने अस्तित्व से चिपका रहता है। यह अभिनिवेश कहलाता है। इसी के साथ यह जन्म-मरण का अन्तहीन चक्र पूर्ण हो जाता है। जब तक साधक स्वयं को प्रकृति के इस जाल से मुक्त करने में सफल नहीं होता, तब तक यह प्रपंच अनवरत चलता रहता है।

अष्टांग योग तथा उपर्युक्त वर्गीकरण के बीच समानता स्पष्ट है। यम और नियम साधक का मार्ग प्रशस्त करते हैं। आसन तथा प्राणायाम के अभ्यास द्वारा साधक जीवन की सच्चाई जान पाता है। वह सुख-दुःख, शीत-उष्ण जैसी विपरीत भावनाओं के परे जाने में समर्थ होता है। वह स्व-केन्द्रित जीवनशैली से चिपका नहीं रहता। अभिनिवेश का समूल नाश हो जाता है। प्रत्याहार और धारणा साधक को राग-द्वेष से परे ले जाते हैं। ध्यान उसकी अस्मिता को विसर्जित कर देता है। अंततः निर्विकल्प समाधि में अविद्या का आवरण भंग होता है और साधक जीवनमुक्ति प्राप्त करता है।

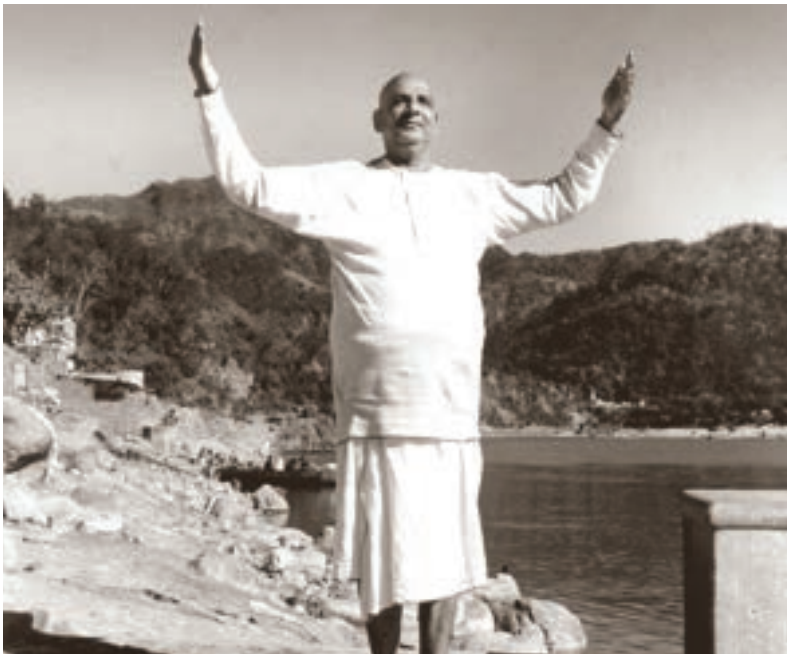
एक अन्य विवेचन के अनुसार साधक को मोक्ष की उपलब्धि, मन के मल (अशुद्धियाँ), विक्षेप (उथल-पुथल) तथा आवरण (अज्ञान का पर्दा) के हटने के उपरांत होती है। इसमें राजयोग साधक की बड़ी सहायता करता है। यम और नियम का अभ्यास मन के मल की सफाई करता है, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार मन को दृढ़ता एवं एकाग्रता प्रदान करते हैं तथा धारणा, ध्यान और समाधि अज्ञान के अंधकार को परे हटाते हैं। इस प्रकार साधक ज्ञानालोक सम्पन्न हो, अन्ततः मुक्ति का पुरस्कार प्राप्त करता है।

राज योग की विधियाँ सार्वभौम हैं

साधना की सभी विधियाँ इस बात से सहमत हैं कि साधक कोई भी मार्ग क्यों न पकड़े, उसमें वैराग्य का होना पहली आवश्यकता है। उसे भौतिक आनन्दोपभोग की वस्तुओं से दूर रहना चाहिए। इच्छा का शमन करना चाहिए, क्योंकि इच्छा ही मन का पोषण कर, मानस-सरोवर में वृत्तियों की अनगिनत लहरें उत्पन्न करती है। इच्छा ही व्यक्ति के अस्तित्व को कायम रखती है, उसी के कारण पुरुष प्रकृति की लीला का आनन्द लेना चाहता है तथा परिणामस्वरूप बंधन में पड़ता है। इच्छा के समाप्त होने पर ही पुरुष अपने वास्तविक स्वरूप में अवस्थित होकर आनन्द के साम्राज्य में विचरता है। जिस आनन्द की वह प्रकृति तथा उसकी क्षणिक वस्तुओं में तलाश करता आ रहा था, उस आनन्द का अक्षय स्रोत सदा उसके भीतर था, बाह्य वस्तुओं में उसकी तलाश मन की लीला मात्र थी। इस प्रकार जब मन पुरुष के समक्ष सुखोपभोग की वस्तुएँ प्रस्तुत नहीं कर पाता तब उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि वृत्तियों और विचारों के बिना मन जीवित नहीं रह सकता। वैराग्य की सहायता से सभी बंधन समाप्त हो जाते हैं।

मुक्ति की अन्य आवश्यक शर्त अभ्यास है। दीर्घकाल तक और निरंतर किया गया साधना क्रम एक अरसे बाद मन के उपद्रवों को पूर्णतया शांत कर देता है। चित्त के विभिन्न स्तरों से वृत्तियों का निर्मूलन होते जाता है, साधक को अनेक सिद्धियों और दिव्य दृश्यों का अनुभव होता है। लेकिन महर्षि पतंजलि साधक को सचेत करते हैं कि वह सिद्धियों के मोह में न पड़े, अन्यथा वह पथभ्रष्ट हो सकता है। साधक सतत् आगे बढ़ता रहे, सिर्फ कैवल्य के लक्ष्य को दृष्टिगत रखे। उसका अभ्यास तब तक जारी रहे जब तक अभ्यास करने वाला ही न रहे, अर्थात् अहं और उससे जनित द्वैतपूर्ण अज्ञान का पूर्ण विलोप न हो जाय।

विश्व के सभी महान् धर्मों द्वारा राजयोग के मौलिक सिद्धान्त जैसे सदाचारी जीवन तथा सम्यक् चिन्तन अनिवार्य बताए गए हैं। बौद्ध तथा जैन धर्मों ने भी सत्य, अहिंसा तथा सदाचारपूर्ण जीवनशैली को आवश्यक बताया है। यही सब बातें इस्लाम तथा ईसाई धर्म की भी आधारभूत शिक्षाएँ हैं। वस्तुतः दुनिया का कोई भी धर्म नैतिक पतन या मानसिक भटकन को स्वीकार नहीं करता। महर्षि पतंजलि ने योग की संरचना काल्पनिक सिद्धान्तों पर नहीं की थी। उनके सिद्धान्त और उन पर आधारित अभ्यास पूर्णतया वैज्ञानिक और सार्वभौम हैं। व्यक्ति की ईश्वर तथा आत्मा के बारे में चाहे जो भी अवधारणा हो, वह योगाभ्यास को अवश्य अपना सकता है। अगर सीढ़ी-दर-सीढ़ी वह आगे बढ़े तो उसे वही सब अनुभव होंगे जो परख की कसौटी पर सर्वमान्य होंगे। इस तरह योग का व्यावहारिक पक्ष सार्वभौम है, विश्वव्यापक है।



ध्यान के सोपान

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आप अपने ध्यान के प्रतीक पर चित्त को स्थिर करने में जब असफल हों, जब आपको लगे कि आपका मन अति चंचल होकर विक्षिप्त हो रहा है या आप ध्यान के समय दिवास्वप्न में खो जाते हैं, उस समय आपको चाहिए कि आप अपनी ध्यान की विधि बदल दें। आपको उस समय एकाग्रता के अभ्यास के बदले अन्तर्मौन का अभ्यास करना चाहिए। अन्तर्मौन में आप मन को स्वतन्त्र छोड़ देते हो तो मन अपने अनुकूल विचारों को प्रकट करता है। आप इन सबको द्रष्टा की तरह देखते रहते हो। यदि ऐसा नहीं करोगे तो मन इन विचारों का विरोध करने लगेगा। इसका परिणाम यह होगा कि आपके मन में पहले से कहीं ज्यादा तनाव उत्पन्न हो जायेगा।

अन्तर्मौन का अभ्यास उन व्यक्तियों के लिये है, जिनका मन उनके नियन्त्रण में नहीं रहता या जिन्हें चेतना की शुद्ध अवस्था प्राप्त न हुई हो। ये लोग जब ध्यान में बैठते हैं, तो ऊँघने लगते हैं, आँखें झपकने लगती हैं। इसलिए इस अवस्था में उन्हें निश्चित रूप से अन्तर्मौन का अभ्यास करना होगा, जिससे न तो मन के साथ लड़ने की जरूरत पड़े, न विचारों को रोकने की और न व्यक्तित्व को खोने की। इसमें आप मात्र साक्षी भाव से मन के व्यवहार को देख सकते हैं। अन्तर्मौन करते हुए अगर आप एक बार अपने मन को पकड़ने में सफल हो जायेंगे तो उसके बाद आपको अन्तर्मौन करने की जरूरत नहीं रहेगी। अन्तर्मौन का अभ्यास विशेषकर चंचल चित्त वालों के लिये एवं एकाग्रता का अभ्यास शांत चित्त मनुष्यों के लिये है।

विभिन्न प्रवृत्तियों के लिये ध्यान की विधियाँ

मानव स्वभाव को मुख्यतः तीन भागों में विभक्त किया गया है। कुछ लोग स्वभाव से ही सात्त्विक होते हैं, कुछ लोग राजसिक, कुछ तामसिक। तामसिक व्यक्ति का मन बहुत प्रमादी होता है, राजसिक व्यक्ति का मन बहुत सक्रिय होता है तथा सत्त्व-गुण प्रधान व्यक्तियों का मन सन्तुलित होता है, इनमें चंचलता बहुत कम होती है। तामसिक व्यक्ति अजगर की भाँति निष्क्रिय होता है। जैसे अजगर अपने भोजन के लिये कहीं जाता नहीं, उसकी चेतना थोड़ी

देर के लिये जाग्रत होती है, मगर अधिकतर सोई रहती है, वैसे ही तामसिक व्यक्ति का भी हाल होता है। उसकी उन्नति धीरे-धीरे होती है। राजसिक स्वभाव के लोग प्रतिक्रियाशील होते हैं। इनका मन इतना चंचल होता है कि हम इनकी तुलना बन्दर से कर सकते हैं। सात्त्विक मन की तुलना बर्फ में खड़े वृक्ष से कर सकते हैं, जिसके पत्ते गिरती हुई बर्फ को खामोशी से अपने ऊपर जमने देते हैं, उन पर उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

सात्त्विक मन वाले सीधे एकाग्रता का अभ्यास प्रारम्भ कर सकते हैं। ध्यान में जब कोई विचार उठता है, तो तुरन्त मन को नियन्त्रित कर उस



विचार को कह सकते हैं – ‘अभी नहीं आना है’ या ‘रुक जाओ।’ राजसिक लोगों को किसी दूसरी विधि को अपनाना चाहिए। जब ध्यान के समय मन में कोई विचार उठे तो कहना चाहिए – ‘ठीक है, आ जाओ।’ इनको अपने विचारों को रोकने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। चाहे वह विचार अच्छा हो या खराब, चाहे उसे वे चाहते हों या न चाहते हों, पर उस विचार को देखते जाना चाहिए।

जब व्यक्ति मन्त्र-जप, ध्यान या प्रतीक पर चित्त को एकाग्र करने का अभ्यास कर रहा हो और अचानक उसे अपने मित्र की याद आ जाये या उसका कोई दुर्व्यवहार याद आ जाये तो उस विचार को रोकना नहीं चाहिए, उसे केवल देखते जाना चाहिए। मंत्र का जप करते जाना और उस उठने वाले विचार को उठने देना। केवल उसे साक्षी भाव से देखते जाना। एक घण्टे के अभ्यास में हो सकता है वह दस ही मिनट अपने प्रतीक का ध्यान कर सके। इस प्रकार अभ्यास में बहुत देर लगेगी, परन्तु निश्चित ही मन धीरे-धीरे एकाग्र होने का अभ्यस्त हो जायेगा और शान्त होने लगेगा।

तामसिक लोगों के लिये बहुत ही सक्रिय पद्धति का होना आवश्यक है, अन्यथा वे एक आसन में अगर बैठ जायें तो कुछ ही मिनटों में उन्हें नींद आ जायेगी। वे अपनी चिन्तार्ये, समस्यायें, दुःख, भय, सब-कुछ भूल जायेंगे और नींद खुलने पर सोचेंगे कि उनका ध्यान बहुत अच्छा हुआ। अतः तामसिक व्यक्ति को क्रियात्मक ध्यान करना चाहिए। उसे सर्वप्रथम प्राणायाम से सीखना प्रारम्भ करना चाहिए, तब क्रियायोग। तामसिक व्यक्ति को अपने मन को कीर्तन-भजन द्वारा एकाग्र करने का अभ्यास करना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों को चित्त को अन्तर्मुख करने का अभ्यास नहीं बतलाना चाहिए।

अब आपकी समझ में आ गया होगा कि जब तामसिक स्वभाव वाले व्यक्ति को अन्तर्मुख होने का निर्देश दिया जायेगा तो वह प्रमाद के कारण सो जायेगा। इसी तरह यदि राजसिक स्वभाव वाले को अन्तर्मुख होने को कहा जायेगा तो हो सकता है, वह अनियन्त्रित या विक्षिप्त हो जाये। पर सात्त्विक व्यक्ति अन्तर्मुखता से समाधि की अवस्था को प्राप्त कर सकता है। इसीलिये विभिन्न व्यक्तियों के लिये, स्वभाव के अनुकूल भिन्न-भिन्न साधना को बतलाया गया है। तन्त्रशास्त्र का यह निर्देश है कि विशिष्ट साधना का चयन व्यक्ति के विकास, सामर्थ्य एवं उसकी श्रेणी को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए।

अन्तर्मौन का अभ्यास

आराम से बैठ जाओ या चित लेट जाओ, अपने मन को ढीला छोड़ दो, अपने शरीर को बिल्कुल शान्त कर दो। मन में जो भी विचार उठते हैं उनको देखते जाओ। इस प्रकार यह अभ्यास एक महीने, दो महीने, तीन महीने, चार महीने, पाँच महीने, छः महीने तक करते जाओ। पहले-पहल यदि आपके मन में गन्दे विचार आयें, उद्वण्डता के विचार आयें, पाप के विचार आयें, व्यभिचार के विचार आयें या अपराध के विचार आयें, तो समझना कि यह बहुत अच्छा लक्षण है। जैसे गन्दा पेट साफ होता है, तो पहले गन्दी बास बाहर निकलती है, वैसे ही अंतर्मौन की क्रिया में जब मन अपने विचारों को निरंतर बाहर फेंकता है, तब उस समय बुरे विचार आते हैं। यह अच्छा लक्षण है। इस प्रकार चार-पाँच महीने तक करते जाओ।





अब आपको विश्लेषण करना है – मेरे मन में कौन-से विचार आते हैं? मेरे मन में ऐसे विचार क्यों आते हैं? इन विचारों का क्या कारण है? मैंने किन-किन चीजों को देखा? किन-किन रूपों और भावों को देखा? किन-किन लक्षणों को देखा? किन-किन घटनाओं को देखा? इन चीजों का विश्लेषण करना होगा। इनका विश्लेषण करते-करते आपका मन शिशु काल की बहुत-सी घटनायें देखेगा। अन्तर्मौन के अभ्यास में मुझे अपने बचपन की छोटे महीने की

घटना दिखायी दी थी, जब मेरी माँ ने मुझको चपत लगायी थी। मनोवैज्ञानिक भी कहते हैं कि मनोविश्लेषण से एक ऐसी अवस्था आती है, जब मनुष्य अपने बाल्य-काल में चला जाता है। उसका मन, उसकी स्मृति बाल्यावस्था में विचरण करती है। हम अपने को छोटे-से बच्चे के रूप में माँ की गोद में पाते हैं, और उस समय माँ ने हमको जिस प्रकार का संस्कार दिया, हमारे साथ जिस प्रकार का व्यवहार किया, जिस तरह हमको प्रेम दिया, जिस प्रकार से लाड़ किया और जिस प्रकार से हमको ताड़ना दी, वे सब चीजें सामने आती हैं।

हमारे जीवन में सबसे बड़ा हाथ माँ का है, क्योंकि माँ का दिया हुआ अच्छा और बुरा, दोनों हमारे संस्कारों पर ब्रह्मा के अमिट लेख की तरह जम जाते हैं, मिट नहीं सकते। माँ का स्थान सबसे ऊँचा माना जाता है। हमें उसे मानना चाहिए, उसके पैर छूने चाहिए। इसलिए नहीं कि वह पूज्य है, हमसे बड़ी है, हमारे पिता की पत्नी है, बल्कि इसलिए कि उसका जो अनुदान है, उसने हम लोगों को जो दान-दक्षिणा दी है, उसका प्रभाव आज तक हम लोगों पर पड़ रहा है। बहुत-से लोग मुझसे पूछते हैं, 'आप साधु कैसे बने?' मैं कहता हूँ, मेरी माँ से पूछो। हमें हमारी माँ ने पैदा ही ऐसा किया था। गृहस्थ आश्रम झेला नहीं, संन्यास आश्रम दिया।

माँ का जो काम होता है, वह बच्चे के जीवन का संरक्षण करना होता है। सारी बीमारियाँ, चाहे वे अनुवांशिक बीमारियाँ हों, दैवी बीमारियाँ हों या

मानसिक बीमारियाँ हों, इन सबका कारण माँ ही है, कोई दूसरा नहीं। हमारी अमीरी-गरीबी की कर्ता भी माँ है। माँ हमारा बैंक-बैलेन्स बनाने वाली है। हम लोगों के जीवन में बाप लोगों का केवल रूपये में आना-दो आना, पैसा-दो पैसा अनुदान है। अन्टानवे प्रतिशत हमारे जीवन में माँ है और उनसे हम बुढ़ापे तक छुट्टी नहीं पाते हैं।

इस जीवन में जो रोग, शोक, मोह, व्यथा, सफलता-असफलता है, वह मनुष्य के भूतकाल के कर्मों पर आधारित है, आप मानें या न मानें। बहुत-से लोग इस बात को नहीं मानते, मगर हम मनोविज्ञान के तौर पर जानते हैं। हमने एक-दो घटनायें आपको बता दीं, पर हम एक नहीं, हजारों घटनायें आपके सामने बतला सकते हैं, जहाँ मनुष्य के दुःख का कारण, रोग का कारण, कुकर्म का कारण, अपराध का कारण वर्तमान नहीं, बल्कि उसका भूतकाल है। वर्तमान कभी मनुष्य के दुःख का कारण नहीं बनता। तुम दुःखी क्यों हो? कल मेरा बेटा मर गया, गलत बात। तुम सुखी क्यों हो? अब हमारी तलब बढ़ गयी, ढाई सौ से पौने चार सौ रूपये हो गयी। कारण वह नहीं है। हम लोगों ने सुख और दुःख के कारणों को जो समझा है, वह गलत है। मनुष्य के सुख-दुःख का कारण उसके भूतकाल पर आधारित है और वह पूर्वजन्मों से शुरू होता है। इसको देखने के लिए, जानने के लिए और नष्ट करने के लिए, हम लोगों के योगशास्त्र में यह अन्तर्मौन की क्रिया है।

अन्तर्मौन की क्रिया जरूर करें। इस विद्या को पश्चिमी देशों के मनोवैज्ञानिक लोग यहाँ से ले गये। वहाँ वे एक-एक बीमारी में, एक मनोवैज्ञानिक सिटिंग का, एक उपचार के चालीस हजार रूपये तक लेते हैं। रोगी को वे चित लिटा देते हैं, योग विधि से शिथिल कराते हैं और कहते हैं – ‘बोलो तुम्हारे मन में कौन-कौन-से विचार आते हैं? बतलाते जाओ।’ रोगी कहता है, ‘मेरे को यह बीमारी है, मेरे को माँ-बाप की याद आ रही है, मेरे को बीवी की याद आ रही है।’ वह बोलता जाता है। मनोवैज्ञानिक कहता है, ‘अब तुम ठीक होते जा रहे हो, अब ठीक हो रहे हो, अब ठीक हो रहे हो।’ वह एक बार नहीं, महीनों तक सिटिंग लेता है, चालीस हजार रूपये ऐंठता है, केवल इसी अन्तर्मौन विद्या के सहारे, जो वेदान्त पर आधारित है। आखिर वेदान्त क्या है? ‘मैं द्रष्टा हूँ – सुख का द्रष्टा, दुःख का द्रष्टा, पाप के विचारों का द्रष्टा, पुण्य के विचारों का द्रष्टा, मैं कर्ता नहीं हूँ।’ इसी प्रकार अन्तर्मौन की क्रिया में भी विचार किये जाते हैं।

योग का विकास क्रम

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

आज के दौर में योग के क्षेत्र में दो प्रवृत्तियाँ चलन में देखी जाती हैं – एक तो योग के व्यापक प्रचार-प्रसार की प्रवृत्ति जिसमें हर व्यक्ति योग से कुछ-न-कुछ मुनाफा निकालना चाह रहा है, और दूसरी, योग की शैक्षिक प्रवृत्ति जो शोध कर रही है कि आज के दौर में कौन-से योगाभ्यास उपयोगी सिद्ध होंगे और कैसे उन्हें अपनी जीवनचर्या में सहजता से अपनाया जा सकता है। विश्व में ऐसे बहुत-से लोग हैं जो योग जगत् में नये, सराहनीय कार्य कर रहे हैं, और साथ ही ऐसे लोग भी हैं जो दूसरों के कार्यों से श्रेय और लाभ उठा रहे हैं।

किसी वृक्ष के नीचे एक योगी ध्यान लगाता है। उसी पेड़ के नीचे एक चोर अपना चोरी का सामान बांटने के लिए आता है। उसी वृक्ष के दूसरी तरफ एक थका हुआ यात्री गहन निद्रा में सोया हुआ है। वृक्ष की छाँव तले जो कुछ हो रहा है, उसके लिए वृक्ष को दोष नहीं दिया जा सकता। वृक्ष का



स्वभाव है अपने नीचे आने वाले हर व्यक्ति को छाया देना, चाहे वह व्यक्ति योगी है या चोर है या यात्री है या बच्चा है।

यह तो व्यक्ति का संकल्प और लक्ष्य होता है जो उसके कर्म, ज्ञान और जीवन को ऊपर उठाता है। योग का यही प्रयास रहता है कि तुम अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को पहचान सको, उसके प्रति सजग रह सको और उसे प्राप्त करके तुष्टि एवं तृप्ति का अनुभव कर सको। यदि तुम्हारे अन्दर सजगता है तो योग तुम्हारे लिए महत्त्वपूर्ण साधन है, अन्यथा सजगता के अभाव में योग तुम्हारे लिए केवल जिज्ञासा और कौतूहल का विषय बनकर रह जायेगा और तुम स्वयं को आन्तरिक रूप से परिवर्तित नहीं कर पाओगे। किताबी ज्ञान से तुम अपनी बुद्धि को तो ठसाठस भर सकते हो, लेकिन जब तक तुम निष्ठावान्, गंभीर और प्रतिबद्ध नहीं बन जाते, जब तक अपने अन्दर छिपी वृत्तियों को बाहर नहीं ले आते, तब तक तुम्हारा यह किताबी ज्ञान अनुभव और व्यवहार में नहीं आ सकता।

आज की आवश्यकता – योग अभ्यास से योग साधना तक

2013 के विश्व योग सम्मेलन के दौरान यह घोषणा की गई थी कि अब हमें योग को एक अलग दृष्टिकोण से देखना होगा। हमने पचास साल तक योग का व्यापक प्रचार-प्रसार किया। हम स्वामी शिवानन्द जी द्वारा प्रारंभ की गई और स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा जारी रखी गई योग परम्परा के अंग हैं जिसकी छत्रछाया में हम सभी यहाँ उपस्थित हैं। आज इस प्रश्न पर चिन्तन करना आवश्यक है कि हमने अपने जीवन में योग को कितना आत्मसात् किया है। सामान्यतया हमने योग को आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण और एकाग्रता के कुछ अभ्यासों तक ही सीमित देखा है। दुनियाभर के योग केन्द्रों में योग की कक्षाएँ प्रायः ऐसे ही संचालित की जाती हैं।

योग के ये चार पक्ष – आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण और एकाग्रता, यौगिक परम्परा और यौगिक दर्शन की पूर्णता को नहीं दर्शाते। ये तो यौगिक विषय की आंशिक समझ को ही दर्शाते हैं। एक अन्य प्रासंगिक और विचारणीय बात यह है कि यद्यपि आज बहुत-से लोग योगाभ्यास करते हैं, किन्तु बहुत कम योग साधना के मार्ग पर चलते हैं। लोग केवल अपनी आवश्यकता और लाभ के लिए योगाभ्यास करते हैं। यदि उनके मन में तनाव है तो मानसिक विश्रान्ति के लिए कुछ योग कर लेते हैं। यदि शरीर कड़ा है

तो उसे लचीला बनाने के लिए वे कुछ योगाभ्यास कर लेते हैं। यदि कुछ और समस्या या कठिनाई है तो उससे छुटकारा पाने के लिए लोग योग का अभ्यास करते हैं। बहुत कम ही लोग इससे आगे बढ़कर योग द्वारा निर्धारित लक्ष्यों का अनुभव करने के लिए योगाभ्यास करते हैं। जब तक योगाभ्यास केवल व्यक्तिगत आवश्यकताओं और अपेक्षाओं पर आधारित होता है तब तक इसकी अनुभूति भी सीमित ही रहती है।

जब तुम अपनी आवश्यकता, रुचि और पसंद के अनुसार ही योग का अभ्यास करते हो तब तुम केवल एक योगाभ्यासी हो। एक अभ्यासी के रूप में योग से तुम्हारा सम्बन्ध सीमित रहेगा, क्योंकि जैसे ही तुम बेहतर अनुभव करने लगोगे, तुम्हारा योग का अभ्यास और योग से सम्बन्ध समाप्त हो जाएगा। आज पूरे विश्व में योगाभ्यासियों में यही प्रवृत्ति है, बहुत कम लोग ही इससे आगे बढ़कर अगले स्तर पर जाने का प्रयास करते हैं और वह अगला स्तर है योग साधना का। सभी योगाभ्यासियों को इस महत्त्वपूर्ण बिन्दु को समझने का प्रयास करना चाहिये कि साधना में योग द्वारा निश्चित किये गये लक्ष्यों तक पहुँचने का दृढ़ प्रयास किया जाता है।

अपने व्यक्तिगत अभ्यास और विकास के लिए इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिये। योग का सम्पूर्ण अनुभव और समझ पाने के लिए तुम्हें योगाभ्यास के अगले स्तर, योग साधना की तरफ आगे बढ़ना है। योग साधना का तात्पर्य योग द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए लम्बे समय तक किये गये प्रयास से है। इस प्रयास में नियमितता और निरन्तरता बनाये रखनी चाहिए, साथ ही उस प्रयास में दृढ़ विश्वास और श्रद्धा रखनी चाहिए। योग सूत्रों में स्पष्ट कहा गया है – *सा तु दीर्घकाल-नैरन्तर्य-सत्काराऽसेवितो दृढभूमिः* अर्थात् लम्बे समय तक, बिना रुके और श्रद्धापूर्वक करने से साधना दृढ़ हो जाती है। नियमितता, निरन्तरता और श्रद्धा के इन तीन अवयवों की सहायता से तुम योगाभ्यास से योग साधना की ओर बढ़ सकते हो।

एक बार जब तुम योग के साधना क्षेत्र में प्रवेश करते हो, तब तुम जिस लक्ष्य की अनुभूति करना चाहते हो, उसे तुम्हारे द्वारा नहीं बल्कि योग द्वारा निश्चित किया जाता है। यदि तुम योग के क्रम और प्रणाली का पालन करते हो तो अन्त में इसका एक निश्चित परिणाम प्राप्त होगा। योग की सभी शाखाओं के लक्ष्य और परिणाम पहले से परिभाषित हैं। हठयोग का उद्देश्य व्यक्तित्व में सौर और चन्द्र ऊर्जा के प्रवाहों को नियन्त्रित करना है, इड़ा और पिंगला

नाड़ियों में सन्तुलन स्थापित करना है। हठयोग के अभ्यास से ही तुम शारीरिक शुद्धिकरण, मानसिक सन्तुलन और एकाग्रता प्राप्त कर सकते हो।

राजयोग का उद्देश्य मन के व्यवहारों को व्यवस्थित करना है। महर्षि पतंजलि इसे चित्तवृत्ति-निरोध कहते हैं। अब बताओ कि कितने योगाभ्यासियों ने अपनी मानसिक अभिव्यक्तियों और व्यवहारों को सकारात्मक एवं सृजनात्मक तरीके से नियन्त्रित करने का प्रयास किया है? शायद कुछ लोगों ने थोड़ा बहुत प्रयास किया हो, किन्तु इसे लम्बे अर्से के लिए नहीं किया गया और इससे मानसिक व्यवहार में कोई विशेष परिवर्तन भी नहीं आया। यदि राजयोग के अभ्यास के द्वारा तुम अपने मन की आदतों और व्यवहारों को बदल नहीं पाते हो तो कभी चित्तवृत्ति-निरोध का अनुभव प्राप्त नहीं कर सकते। तुम तीस वर्ष तक ध्यान के अभ्यासी बने रहो, तुम पूरी उम्र राजयोग के अभ्यासी बने रहो, लेकिन जब तक तुम अपने मन की वृत्तियों को परिवर्तित करने में



सक्षम नहीं हो जाते तब तक राजयोग की साधना में तुम्हें पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती। इसी प्रकार योग की सभी शाखाओं एवं अंगों के विशिष्ट उद्देश्य हैं और इन उद्देश्यों की प्राप्ति को ही सामने रखकर योग मार्ग पर आगे बढ़ना होगा।

तुम्हें अब योगाभ्यास से परे योग साधना में प्रवेश करना है। अभ्यास तो योग का एक परिचय मात्र है, तुम्हारी आवश्यकता की पूर्ति के लिए, चाहे वह आवश्यकता जो भी हो। इसके बाद योग के वास्तविक स्वरूप का अनुभव करने तथा यौगिक सिद्धान्तों द्वारा निश्चित किये गये उद्देश्यों की उपलब्धि के लिए तुम्हें अभ्यास से साधना की ओर आगे बढ़ना है। आज योग के प्रति यही दृष्टिकोण होना चाहिये। यदि तुम यौगिक सिद्धान्तों और शाखाओं के लक्ष्यों का अनुसरण करते हो और उनकी प्राप्ति की आकांक्षा रखते हो, तो तुम देखोगे कि तुम्हारा अभ्यास प्रगतिशील, व्यवस्थित और लाभकारी होते जाएगा। परन्तु यदि अपनी आवश्यकताओं के अनुसार ही योगाभ्यास करोगे तो वह प्रगतिशील नहीं होगा। यह बिहार योग की परम्परा नहीं है।

स्वामी शिवानन्द जी के समय से ही बिहार योग परम्परा ने कभी योगाभ्यास के पक्ष पर जोर नहीं दिया है। योगाभ्यासों को सीखना अवश्य है, पर उन्हें सीखने के पश्चात् योग साधना की ओर आगे बढ़ना है। यदि तुम बिहार योग परम्परा के दृष्टिकोण से योग साधना के लक्ष्यों का अनुसरण करते हो तो यह केवल शारीरिक लाभ प्राप्त करने के लिए नहीं, बल्कि पूरे व्यक्तित्व के विकास के लिए होगा। बेशक निन्यानवे प्रतिशत लोग शारीरिक लाभ प्राप्त करने के लिए ही योग की शरण में आते हैं, किन्तु यह भी सत्य है कि एक प्रतिशत लोग शारीरिक अभ्यास से योग साधना की ओर जरूर बढ़ेंगे।

स्वामी शिवानन्द जी की सभी शिक्षाएँ योग साधना की ओर निर्देशित करती हैं। वे केवल आसन-प्राणायाम का निर्देश नहीं देतीं, जिससे तुम शरीर को लचीला और नीरोग बना सको। स्वामी शिवानन्द जी की समस्त शिक्षाएँ, चाहे वे कविता, लेख या सत्संग के रूप में हों, वे सभी साधना के लिए उपयुक्त परिस्थिति, वातावरण और दृष्टिकोण विकसित करने में तुम्हारा मार्गदर्शन करती हैं ताकि तुम यौगिक जीवन में प्रगति कर सको। यदि तुम सत्यानन्द योग को आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण और ध्यान तक ही सीमित कर देते हो तो यह गलत है, लेकिन अगर तुम सत्यानन्द योग को योग साधना और योग संस्कृति के रूप में बताते और सिखाते हो तो यह सही है, क्योंकि प्रारंभ से ही इसका लक्ष्य मानव प्रकृति और व्यक्तित्व को सुधारना रहा है।

मानव व्यक्तित्व के विविध आयाम

यदि योग का लक्ष्य मानव व्यक्तित्व का रूपान्तरण है तो योग मानव व्यक्तित्व को किस रूप में देखता है? क्या मानव व्यक्तित्व केवल इस शरीर तक सीमित है? यौगिक सिद्धान्तों के अनुसार मानव शरीर में स्थूल से सूक्ष्म तक पाँच अनुभव होते हैं। इसकी तुलना उस रूसी गुड़िया से कर सकते हैं जिसे खोलने पर अन्दर एक अन्य गुड़िया मिलती है, उसे खोलने पर भीतर एक और गुड़िया मिलती है और यह क्रम चलते जाता है। इसी प्रकार तुम भी पाँच अलग-अलग अनुभवों से बने हो। सबसे स्थूल है अन्नमय कोष अर्थात् यह भौतिक शरीर जो रक्त, मज्जा, अस्थियों, मांसपेशियों और नसों से बना है। इस भौतिक शरीर के अन्दर मनोमय कोष है जिसके अन्तर्गत तुम्हारा मन और तुम्हारी मानसिक अभिव्यक्तियाँ, आदतें, विचार आदि आते हैं। तीसरा है प्राणमय कोष, जिसमें ऊर्जा और शक्ति निहित है। चौथा आयाम चेतना का है जिसे विज्ञानमय कोष कहते हैं और पाँचवा है आनन्दमय कोष, जो आत्मा का आयाम है। यह शरीर तो हमारा बाहरी आकार है, इससे सूक्ष्म मन है, मन से सूक्ष्म प्राण हैं, प्राण से सूक्ष्म चेतना है तथा चेतना से भी सूक्ष्म आत्मा है। इस प्रकार शरीर, मन, प्राण, चेतना और आत्मा, इन पाँच आयामों से मिलकर सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

अपने योगाभ्यास के क्रम में तुम्हें केवल भौतिक शरीर का ही नहीं, बल्कि इन पाँचों कोषों का अनुभव करना है। पाँचों कोषों में प्रवेश करके तुम्हें इन्हें



समस्वरित, सुव्यवस्थित और परिष्कृत करना है। योग का यही लक्ष्य है – शरीर, मन, प्राण, चेतना और आत्मा के इन सभी आयामों में प्रवेश करना।

अन्नमय कोष से आनन्दमय कोष तक की यात्रा, सम्पूर्ण मानव व्यक्तित्व के विकास को दर्शाती है। इस यात्रा में शरीर से मन, मन से प्राण, प्राण से चेतना और चेतना से आत्मा की ओर बढ़ना सम्मिलित है। मानव व्यक्तित्व के सभी आयामों का एक साथ उत्थान होना है। तुम्हारा योगाभ्यास चाहे जिस प्रकार का हो, उसका सम्बन्ध तुम्हारे जीवन के इन पाँच आयामों और अनुभवों से अवश्य होना चाहिये। साधना में तुम्हारे अनुभवों को गहरा करने के लिए चुने गये योगाभ्यास इतने सूक्ष्म होने चाहिये कि वे इन पाँच आयामों में निहित अनुभवों को भी सक्रिय कर सकें।

योग संस्कृति का विकास

तुम्हें योगाभ्यास से योग साधना की ओर बढ़ना ही है, क्योंकि तुम चाहे जिस योग परम्परा से सम्बन्धित हो, अभ्यास पर्याप्त नहीं है। आज तक प्रायः सभी लोग केवल योगाभ्यास पर केन्द्रित रहे हैं। चाहे तुम न्यूयॉर्क की सड़कों पर सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते हो, भारत के किसी आश्रम में पवनमुक्तासन करते हो या हिमालय की कन्दराओं में एकान्तिक ध्यान करते हो, ये तुम्हारे व्यक्तिगत चुनाव हैं। ये योग के सिद्धांतों के प्रति तुम्हारी निष्ठा को नहीं दर्शाते। अगर तुम योग के सिद्धांतों के प्रति निष्ठावान् और समर्पित हो तो तुम गहन अनुभवों के केन्द्र बन जाओगे।

योग के क्षेत्र में हमें योग अभ्यास से योग साधना, योग साधना से यौगिक जीवनशैली और यौगिक जीवनशैली से योग संस्कृति की ओर आगे बढ़ना है। जब श्री स्वामीजी कहते थे कि 'योग भविष्य की संस्कृति बनेगा' तो इसका अर्थ यह नहीं कि ढेरों लोग योगाभ्यास करेंगे या लाखों लोग इस योग संस्कृति का निर्माण करेंगे। यहाँ संस्कृति का तात्पर्य क्रमिक विकास से है।

योग के इन चार सोपानों – योग अभ्यास, योग साधना, यौगिक जीवनशैली तथा योग संस्कृति को कैसे समझना प्रारंभ करें? अधिकतर लोग योग के एक छोटे-से हिस्से का ही अभ्यास कर रहे हैं। योग के इस छोटे-से अंश के विषय में भी तुम्हें अपने उद्देश्य के प्रति सजग होना है कि तुम यह अभ्यास क्यों कर रहे हो। यदि तुम्हारे योगाभ्यास का उद्देश्य स्वास्थ्य प्रबन्धन है तो योग दर्शन में न जाकर, तुम्हें इसे केवल स्वास्थ्य तक सीमित रखना

चाहिये। यदि तुम्हारा उद्देश्य तनावमुक्ति है तो तुम्हें केवल तनावमुक्ति तक ही सीमित रहना चाहिये, योग दर्शन में नहीं जाना चाहिए। मन में यह स्पष्टता रहे कि तुम योग का प्रयोग अपने जीवन की किस विशेष परिस्थिति को सुधारने के लिए कर रहे हो। अगर तुम योग की विभिन्न शैलियाँ आजमाओगे तो तुम ज्यादा आगे तक नहीं जा पाओगे। बस इतना हो सकता है कि शुरू में कुछ नया करने पर जोश और उमंग का अनुभव हो, पर तुम उसे कायम नहीं रख पाओगे, अपना विकास और परिष्कार नहीं कर पाओगे।

यहाँ से तुम्हें योग के अगले स्तर, योग साधना की ओर बढ़ना है, जहाँ तुम योग की प्रत्येक शाखा के उद्देश्य और लक्ष्य की पहचान करते हो, और उन्हें अनुभव करने के लिए प्रयास करते हो। हठयोग के अनेकों अभ्यासी हैं, लेकिन अगर मैं उनसे यह प्रश्न करूँ कि क्या वे अपनी इड़ा और पिंगला नाड़ियों के विषय में जानते हैं तो वे कहेंगे 'नहीं'। यदि मैं उनसे पूछूँ कि क्या उनकी इड़ा और पिंगला नाड़ियाँ सन्तुलित हैं, तो हो सकता है कि वे मेरे प्रश्न को समझें ही नहीं, क्योंकि वे हठयोग के प्रयोजन को नहीं जानते। अधिकांश लोग राजयोग के प्रयोजन को भी नहीं समझते। उन्हें अगर योगनिद्रा सिखाई जाती है तो वे सोचते हैं कि 'वाह! आराम का कितना अच्छा अवसर मिला है, अब सो जाना है।' क्या तुम योगनिद्रा में पूरे समय सजगता बनाए रखने में सक्षम हो, या तुम योगनिद्रा में सोते हो? जरा सोचो कि तुम योगनिद्रा का अभ्यास क्यों करते हो? क्या तुम यह अभ्यास केवल सो जाने के लिए करते हो या तुम यह अभ्यास पहले क्षण से अन्तिम क्षण तक सजगता बनाये रखने के लिए करते हो? यदि तुम योगनिद्रा में सो जाते हो तो यह प्रश्न करना व्यर्थ है कि योगनिद्रा के अभ्यास में वास्तव में क्या घटित होता है।

योगाभ्यास से योग साधना की ओर बढ़ने का विचार स्पष्ट होना चाहिए, जिसमें निष्ठा, गंभीरता और प्रतिबद्धता की भावना सम्मिलित होनी चाहिये। जिस क्षण तुम योग साधना में निष्ठा, गंभीरता और प्रतिबद्धता के साथ प्रवेश करते हो, उसी क्षण योगाभ्यास का समस्त अनुभव और आयाम परिवर्तित हो जाता है। अभी तक तुम उन विभिन्न आयामों के बारे में सजग नहीं हुए हो जहाँ योग तुम्हें प्रभावित कर सकता है। वे आयाम अन्नमय कोष से प्रारम्भ होकर मनोमय, प्राणमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय कोष तक पहुँचते हैं। तुम्हें ऐसी विधियों के अभ्यास के लिए कुछ निश्चित प्रयास करना चाहिए जिससे तुम्हारे व्यक्तित्व के इन पाँचों आयामों को प्रभावित किया जा सके।

झारखण्ड

18 मई से 2 जून तक धनबाद में सत्यानंद आश्रम धनसार द्वारा 'धनबाद योगोत्सव' के रूप में विभिन्न योग शिविरों का आयोजन किया गया। शिविरों के सभी सत्रों का संचालन स्वामी गोरखनाथ ने किया। शिविरों का विवरण इस प्रकार है –



• 19 से 28 मई, श्री मां, चंचनी कॉलोनी, दहिया, धनबाद में दस दिवसीय प्रातःकालीन शिविर; प्रतिभागियों की उम्र 22 से 80 वर्ष के बीच थी



• 19 से 24 मई, श्री माँ, चंचनी कॉलोनी, दहिया, धनबाद में पाँच दिवसीय संध्याकालीन शिविर

• 24 मई, मारवाड़ी विकास ट्रस्ट के लिए श्री माँ, चंचनी कॉलोनी, दहिया, धनबाद में एक संध्याकालीन सत्र



• 25 से 27 मई, तीन दिन का शिविर आई.आई.टी. आई.एस.एम. स्पोर्ट्स एक्टिविटी सेंटर, दहिया, धनबाद में

• 28 मई, सत्यानंद आश्रम धनसार, धनबाद में कीर्तन एवं भजन

• 28 मई को बेरा आश्रम में एक संध्याकालीन कार्यक्रम आयोजित किया गया



• 29 मई से 2 जून, सी.आई.एस.एफ. और बी.सी.सी.एल. अधिकारियों के लिए योग केंद्र, सामुदायिक भवन, कोयला नगर, धनबाद में पाँच दिवसीय प्रातःकालीन कक्षा









- 29 मई से 1 जून, योग केंद्र, सामुदायिक भवन, कोयला नगर, धनबाद में महिलाओं के लिए चार दिवसीय सायंकालीन योग शिविर

प्रतिभागियों की प्रतिक्रिया

योगाभ्यास सीखते और करते समय हमने सात 'स-कारों' को समझा –
 स्थिति – आरंभिक और अंतिम अवस्था के प्रति सचेत रहना
 शिथिलता – आराम से अभ्यास करना
 स्थिरता – अंतिम स्थिति बनाए रखना और योगाभ्यास के प्रभावों का निरीक्षण करना



सावधानी – अभ्यासों की सावधानियों के प्रति सजग रहना
 सांस – आसन की गति के साथ श्वास का समन्वय
 सजगता – आसन-प्राणायाम के प्रभावों के प्रति जागरूकता
 सीमा – अपनी सीमाओं को जानना



वकील की पगड़ी

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

एक वकील कचहरी जाने के लिए घर से निकलता है। जैसे ही वह सड़क पर अपने कदम रखता है, उसे महसूस होता है कि उसकी पगड़ी ढीली है। फिर जैसे ही वह अगला कदम बढ़ाता है, उसकी पगड़ी गिर जाती है और पगड़ी का पूरा कपड़ा जमीन पर फैल जाता है। वकील पगड़ी को फिर से अपने सिर पर बांधना शुरू करता है, लेकिन बांध नहीं पाता है। जितनी बार वह पगड़ी बांधने की कोशिश करता है, उतनी बार असफल हो जाता है। फिर वकील अपने चारों ओर देखता है और उसे घर की सीढ़ियों के नीचे एक गुंबदनुमा रोशनी दिखाई पड़ती है, जिसका गुंबद उसके सिर के आकार का था। वह उस गुंबद की ओर दौड़ता है और उसे अपना सिर मानकर उस पर पगड़ी बांध देता है। इस बार वह पगड़ी बांधने में पूरी तरह सफल हो जाता है। फिर वह गुंबद पर बंधी पगड़ी को आराम से हटाकर अपने सिर पर रख लेता है और कचहरी की ओर चल पड़ता है।



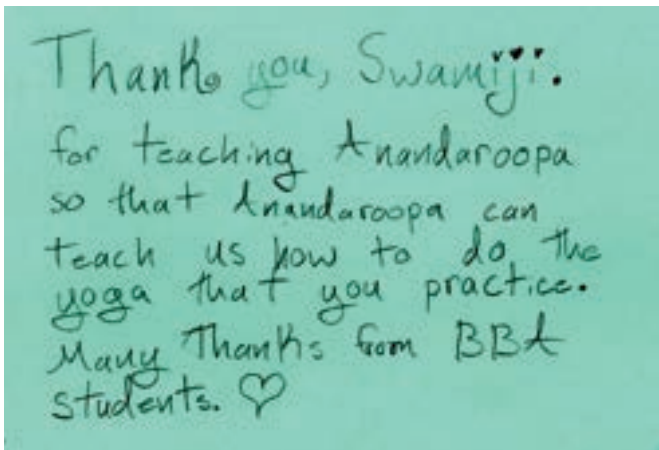
जो व्यक्ति इस पीड़ा और मृत्यु भरे संसार को छोड़कर भगवान के दरबार में जाने का प्रयास करता है, उसे समझ आ जाता है कि उसकी पगड़ी यानि उसका मन ढीला हो गया, उसका आकार बिगड़ गया है। वह हर जगह बिखरा पड़ा है। वह उसे समेटकर अपने सिर के लिए एक सुन्दर पगड़ी बनाने का अर्थात् एकाग्र मन से समाधि लगाकर सिर के शिखर पर स्थित सहस्रार चक्र तक पहुँचने का प्रयास करता है।

वह जितनी बार भी प्रयास करता है, असफल हो जाता है। सहस्रार में स्थित चेतना इतनी सूक्ष्म है कि वह उसे देख नहीं सकता और अपने मन को उससे बांध नहीं सकता। वह अपने चारों ओर देखता है। उसे भगवान की एक छवि मिलती है। एक क्षण के लिए उसे लगता है कि यह छवि भगवान के समान ही है। वह मन को इस छवि पर स्थिर कर देता है। जब सारा मन छवि पर दृढ़तापूर्वक स्थिर हो जाता है, तब वह मन को तुरंत छवि से हटाकर सहस्रार में स्थित परम चेतना तक उठा लेता है। अब उसे ऐसा करना आसान लगता है। फिर वह खुशी-खुशी सर्वोच्च सम्राट्, परम पुरुष भगवान के दरबार में चला जाता है।

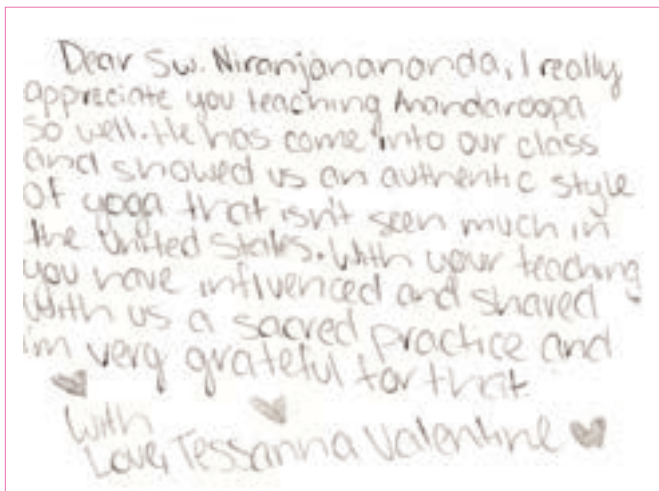


संयुक्त राज्य अमेरिका

संन्यासी आनंदरूप द्वारा वर्मॉन्ट में स्थानीय हाई स्कूल – बर एवं बर्टन अकादमी में दस सप्ताह की योग कार्यशाला आयोजित की गई। विद्यार्थियों की आयु 14 से 18 वर्ष के बीच थी। इस योग अभियान परियोजना की सभी ने सराहना की और इसका युवाओं पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा, जिन्होंने ऐसी कार्यशालाओं को आगे भी आयोजित करने के लिए कहा।



Thank you, Swamiji.
for teaching Anandarooopa
so that Anandarooopa can
teach us how to do the
yoga that you practice.
Many Thanks from B&T
Students. ♡



Dear Sw. Niranjanananda, I really
appreciate you teaching Anandarooopa
so well. He has come into our class
and showed us an authentic style
of yoga that isn't seen much in
the United States. With your teaching
you have influenced and shared
with us a sacred practice and
I'm very grateful for that.
With
Love, Tessaanna Valentine ♡

अफ्रीका

पिछले दस वर्षों से 'योग पुरा विदा' अफ्रीका में सत्यानंद योग का प्रसार कर रहा है। इसका कार्यक्षेत्र तंज़ानिया, मलावी, केन्या, युगांडा, रवांडा और सिएरा लियोन में फैला है। इसकी परियोजनाएँ समाज के विभिन्न वर्गों तक पहुँचती हैं जैसे दज़ालेका (मलावी) और नकीवाले (युगांडा) शरणार्थी शिविरों में रहने वाले सभी उम्र के शरणार्थी; शहरों, छोटे गाँवों और झुग्गियों में रहने वाले किशोर; कीमोथेरेपी से गुज़र रहे बच्चे; ऑटिस्टिक बच्चे; दुर्व्यवहार एवं शोषण के शिकार बच्चे; सड़क पर रहने वाले बच्चे, अनाथालयों और स्कूलों में रहने वाले बच्चे; रवांडा नरसंहार से बचे बुजुर्ग लोग, अस्पताल के कर्मचारी; कमज़ोर वयस्क; रूढ़िवादी मुस्लिम समुदायों में रहने वाली मुस्लिम महिलाएँ तथा अन्य कमज़ोर एवं अभावग्रस्त समुदाय। संन्यासी धर्मज्योति द्वारा संचालित एक अन्य परियोजना ऐसे योग शिक्षकों के प्रशिक्षण पर केन्द्रित है जो अपने समुदाय में योग सिखाने में सक्षम होंगे।

सिएरा लियोन

2023 में सड़क पर रहने वाले बेघर युवाओं के लिए फ्रीटाउन, सिएरा लियोन में दो स्थानों पर निःशुल्क साप्ताहिक योग कक्षाएँ आयोजित की गईं। प्रत्येक योग सत्र के बाद प्रतिभागियों को गर्मागर्म पौष्टिक आहार मिलता है, और महीने में एक बार उन्हें एक मोबाइल नर्स द्वारा देखा जाता है। सामान्य तौर पर कक्षाएँ चार योग प्रशिक्षुओं के एक समूह द्वारा संचालित की जाती हैं। अप्रैल से जून तक समूह के दो सदस्य द्विमासिक यौगिक अध्ययन सत्र के लिए गंगा दर्शन, मुंगेर में थे। शेष सदस्यों ने फ्रीटाउन में बेघर युवाओं को प्रेरित करने के लिए निःशुल्क साप्ताहिक योग कक्षाएँ जारी रखीं। इन कक्षाओं के बाद संगीत और भोजन शामिल रहता।





अध्यात्म का व्यावहारिक रूप

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आप लोगों ने अनेक उपदेशात्मक व्याख्यान सुने होंगे, किन्तु आपने अपने दैनिक जीवन में उनका कितना उपयोग किया? आप यह तो जानते हैं कि यदि घर में पड़ी हुई किसी वस्तु का व्यवहार न करें, तो कुछ ही दिनों में वह अनुपयोगी हो जाएगी। ठीक यही दशा उपदेश की है। विद्या का उपार्जन व्यर्थ है यदि उसका समुचित उपयोग न किया जाए। वह विद्या सर्वथा निरर्थक है, जो दूसरों के काम न आए। इसीलिए जो उपदेश हमें मिले हैं यदि हम उनका अनुसरण नहीं करते तो वे निरर्थक ही हैं। वे अधिक काल तक हमारे पास टिक न सकेंगे। हमारे पास कहने को आध्यात्मिकता, सत्य, सदाचार – सभी कुछ हैं, किन्तु वे सब किस काम के? हमें अच्छे और पवित्र जीवन-यापन के द्वारा इन्हें अभिव्यक्त करना चाहिए। पशुओं में भी मानवी संस्कार अवश्य दृष्टिगत होते हैं और मनुष्य में भी कुछ पाशविक संस्कार अवशेष रह गये हैं। हम इस



बात से इन्कार नहीं कर सकते कि पाशविक संस्कार मूली में लगी हुई मिट्टी की तरह हममें मौजूद हैं। उसे साफ करना हमारा कर्तव्य है।

हमें अपने जीवन में मानवी संस्कारों का विकास करना है तथा पाशविक संस्कारों को हटा देना है। ये जन्मजात पशु संस्कार क्या हैं? जानवरों के जीवन का यदि हम निरीक्षण करें, तो हमें पता चलेगा कि जानवर भोजन करता है, निद्रा लेता है और दूसरों से डरता है। आरामतलब है उसका जीवन। एक कुत्ते का उदाहरण लीजिए। जहाँ कहीं भी उसे भोजन मिले वहाँ खा लेता है। मनुष्य भी यदि ऐसा करे तो हम उसे महान् नहीं कह सकते। मनुष्य ही सबसे उच्च कोटि का प्राणी है। पशु जन्म में जब मनुष्यत्व का विकास होता है, तब वह मानव रूप धारण करता है। वैसे ही मनुष्य में जब देवत्व के गुण पनप उठते हैं, तब सन्त का जन्म होता है। सन्त आध्यात्मिकता की चरम सीमा पर जब पहुँच जाता है तब उसके मुक्ति के द्वार उन्मुक्त होते हैं।

लोग कहते हैं कि उपदेश से हमारा जीवन शुभ और पवित्र होता है, किन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं। गार्हस्थ्य जीवन एक परीक्षा है। जो इसमें सफलता प्राप्त करता है, वह मुक्त हो जाता है, अन्यथा कोल्हू के बैल की भाँति जीवन-कोल्हू

में चक्कर लगाता रहता है। हमारे दैनिक जीवन में प्रतिपल कसौटियाँ आती हैं। हमारे कई मित्र हैं और कई शत्रु भी। क्या हम उनके प्रति घृणा, द्वेष, ईर्ष्या से कभी नहीं देखते? अरे, इतना ही नहीं, उनके विनाश की चेष्टा में भी हम प्रवृत्त होते हैं।

मनुष्य समाज और विश्व की इकाई है। जब हमारे समाज की यह इकाई घर में या समाज में लड़ती रहे, तब समाज में शान्ति कैसे रहेगी? मनुष्य को अपने उत्तरदायित्व का अनुभव कर मानसिक शान्ति धारण करनी चाहिए। मानसिक शान्ति तभी प्राप्त हो सकती है, जब क्रोध को दमन करने में हम पूर्णतया सफल हो सके हों। विचारों के त्याग से शान्ति उपलब्ध नहीं होती। शान्ति की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिकता की आवश्यकता है। आध्यात्मिकता से मन के आलस्य, प्रमाद आदि का त्याग कर देना चाहिए, तब मनुष्य में नवीन चेतना उद्भूत होगी। समाज के प्रति उदासीन वृत्ति धारण करने से शान्ति संप्राप्त होगी, यह समझना भयंकर भूल है। समाज के कल्याण के लिये जो नया मार्ग स्थापित करता है, समाज की शान्ति के लिए जो नये-नये अनुसंधान करता है, वही शान्ति पाता है। जो अपने पास आने वाले को सुख और शान्ति प्रदान करता है, उसे खुश करने का प्रयत्न करता है, उसे ही सुख और शान्ति प्राप्त होती है।

आध्यात्मिकता की सच्ची परिभाषा क्या है? शान्ति। किसी को तनिक भी कष्ट न देना। आध्यात्मिक, राजनैतिक या सदाचार संबंधी विचारों या कार्यों से यदि हम दूसरों के दिल को दुखाते हैं, तो हमें कभी शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। किसी कार्य के करने में यदि आपका उद्देश्य शुभ है तथा दूसरों को शान्ति प्रदान करना ही उसका हेतु है, तो मन की शान्ति अविच्छिन्न रहेगी। भले ही वह कार्य अत्यन्त निम्नकोटि का हो। ध्यान रहे कि बुरे या गलत कामों से हम किसी को भी प्रसन्न नहीं कर सकते। प्रत्येक मनुष्य की प्रसन्नता ही धर्म की सच्ची परिभाषा है। समाज उस व्यक्ति से खुश रहता है जो किसी को भी हानि नहीं पहुँचाता, किसी को भी कष्ट नहीं देता।

पूज्य स्वामी शिवानन्द जी हमेशा यही उपदेश देते हैं कि दूसरों को खुश रखो। यह बात वे जंगल में जाकर अथवा एकांत में बैठकर नहीं समझाते, वरन् समाज में मनुष्यों के बीच रहकर ही समझाते हैं। आपके सिद्धान्त से यदि किसी व्यक्ति की प्रसन्नता पर आघात पहुँचता है, तो आपको उस सिद्धान्त को अवश्य तिलांजलि दे देनी चाहिये। स्वामीजी मानते हैं कि साधु-संन्यासियों को फूलों की क्या आवश्यकता? पादपूजा का उनको क्या उपयोग? शरीर की यह



पूजा क्यों? किन्तु इसके साथ ही उन्होंने जीवन में जिस सत्य का साक्षात्कार किया है, उसे समझना हमारे लिये जरूरी है। वह है भावना। उन्होंने प्रेम का वास्तविक मूल्य पहचाना है। अगाध श्रद्धा से लोग जब भावना का दीप जलाकर, प्रेम पुजापा से उनके पादपद्म की पूजा करना चाहें तो क्या स्वामीजी उनकी कोमल भावना पर कुठाराघात करें? एकाध व्यक्ति यदि ऐसा करे तो हम कह सकते हैं कि शायद वह व्यक्ति मूर्ख होगा, किन्तु सभी तो मूर्ख नहीं हो सकते? ऐसे अवसरों पर आध्यात्मिक सिद्धान्तों को अलग रखना होगा। ऐसा करने से किसी की भी हानि नहीं होती, वरन् इससे लाभ ही होता है। वह लाभ है औरों को खुशी और आनन्द। यही आध्यात्मिकता का व्यावहारिक रूप है।

एक दिन जब एक भिखारी हमारे पास आया और कम्बल मांगने लगा, तब किसी ने कहा कि पिछले साल ही तो कम्बल दिया था, आज फिर क्यों कम्बल मांगने आ गए? श्री स्वामीजी कहने लगे, 'भाई, तुम्हें कम्बल नहीं देना है तो न सही, किन्तु उस भिखारी का अनादर व अपमान न करो। उसे शान्ति प्रदान करना तुम्हारा कर्तव्य है। उसके साथ पूर्ण शान्ति से व्यवहार करो।' शान्ति और आनन्द को अपने जीवन में व्यवहृत करने के असंख्य मौके प्रतिदिन आते रहते हैं, किन्तु कितनी बार हम उन कसौटियों पर खरे उतरते हैं? यह संसार एक स्कूल है, जहाँ हम स्वानुभव तथा दूसरों की गवेषणा से बहुत कुछ सीख सकते हैं। यहाँ असंख्य साधुओं ने मनुष्यों के मध्य रहकर ही अनेक अनुभूतियाँ प्राप्त की हैं। हिटलर ने युद्ध विषयक अनुसंधान युद्धभूमि में किये थे, न कि चहारदीवारी के अन्दर रहकर। जनसाधारण की यह मान्यता है कि साधुओं को किसी चीज का झंझट नहीं। वे सब तो झंझट में उलझे हुए हैं और इसीलिए वे ही जानते हैं कि संसार सत्य है या झूठ। साधुओं

को और काम ही क्या होता है? ऐसे स्थान पर आश्रम की स्थापना कर श्री स्वामीजी ने वास्तविक जीवन द्वारा संसार के इन प्रश्नों का उत्तर दिया है। आश्रम की स्थापना ऐसे स्थल पर हुई है, जहाँ सभी प्रकार के लोग आते हैं, सभी सांसारिक झंझटों को झेलना पड़ता है। श्री स्वामीजी के उच्च जीवन और आदर्श व्यवहार से आकृष्ट होकर भारत के कोने-कोने से लोग उनके दर्शनार्थ वहाँ पधारते हैं। कहाँ-कहाँ से लोग आकर वहाँ निवास करते हैं। हम सभी आज संन्यासी वेश में आपके सामने हैं। जब हम आए तब हमारी न किसी से जान थी, न पहचान। हमने एक-दूसरे को देखा भी नहीं था। मैं जहाँ से आया हूँ कितनी दूरी पर है वह स्थान? किन्तु आज हमारा सम्बन्ध प्रेमभावना से बंधा हुआ है। उन्होंने अपने आत्मज के रूप में हमें अपना लिया है। वे हमसे तथा सबसे ऐसा प्रेम करते हैं जैसा कि पिता पुत्र के साथ क्वचित् ही करता होगा। गृहस्थ लोग तो जब स्वामीजी के दर्शन के लिए आते हैं, तो कुछ-न-कुछ भेंट उन्हें चढ़ाते हैं, किन्तु जब हम आए थे तो अपने साथ कुछ भी लेकर नहीं आए थे।

स्वामीजी ने हमें यह सिखाया कि संन्यासी होते हुए भी कार्यरत रहो। स्वयं स्वामीजी ब्रह्ममुहूर्त में चार बजे से लेकर रात्रि के ग्यारह बजे तक काम



करते हैं। आश्रमवासियों को अत्यधिक कार्यभार के कारण कभी-कभी जप, ध्यान, कीर्तन इत्यादि के लिए खास समय निकाल कर साधना करने के लिए भी अवसर नहीं मिलता। स्वामीजी का कहना है कि मन और शरीर को तनिक भी विश्राम न दो। मन को स्वच्छन्द बन कर विचरण करने न दो। उन्हें सदा कार्यव्यस्त रखो, जिससे कि दोनों थक जाएँ, किन्तु इसके साथ ही आध्यात्मिकता की भावना वैसी-की-वैसी अविच्छिन्न बनी रहे। इसमें जरा भी अन्तर न आवे। गृहस्थों की चुनौती का कितना सुन्दर है स्वामीजी का यह उत्तर! संन्यासी सुबह से शाम पर्यन्त कार्य करते रहने पर भी अपने आध्यात्मिक प्रवाह से क्षण भर भी विमुक्त नहीं होता। सांसारिक पदार्थों की न तो वह चाह करता है और न ही उनके पीछे भागता है। वह तो प्रलोभनों से मुख मोड़कर आगे हो चलता जाता है। गृहस्थों के उन कार्यों का क्या उपयोग जिनमें आध्यात्मिकता का समावेश न हो? श्री स्वामीजी ने व्यावहारिक जगत् में रहकर विश्व को एक अनूठा अनुसन्धान दिया है। स्वामीजी के जीवन पथ का अनुसरण करने वालों को धर्म के साथ कभी टक्कर नहीं लेनी पड़ती। धर्म और आध्यात्मिकता की पटरियों पर जब हमारे जीवन की रेलगाड़ी चलती है, तभी वह अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच सकती है। जीवन ने यदि इनमें से किसी को भी समुचित रूप से स्वीकार नहीं किया, तो जीवन की रेलगाड़ी को टक्कर खानी पड़ती है। फलतः मिलती है अशान्ति। इसीलिए प्रवृत्ति और निवृत्ति के समन्वय को ही योग कहते हैं। परमार्थ और व्यवहार के संयोग का नाम है धर्म।

इस प्रकार के जीवन में शत्रु और मित्र का भेद नहीं होता और न वहाँ ऊँच और नीच का भेद होता है। समाज से किसी भी व्यक्ति का हमें बहिष्कार नहीं करना चाहिए। जो भावना हम एक के लिए रखते हैं, वही हमें दूसरों के लिए भी रखनी चाहिए। जीवन और धर्म, परमार्थ और व्यवहार यदि एकरूप होकर नहीं चलते, तो हमें ऐसे जीवन और ऐसे व्यवहार को परिष्कृत करना होगा, अन्यथा वे आपस में टकराकर अशान्ति का सृजन करेंगे।

परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी सत्यानन्द जी के महागुजरात एवं सौराष्ट्र परिभ्रमण काल दरम्यान 27 जनवरी 1956 को पाटन में दिए सार्वजनिक भाषण का सारांश

– योग-वेदान्त के फरवरी 1956 अंक से साभार उद्धृत

तमिलनाडु – सपने साकार हुए



8 मार्च को आत्म निरंजन योग विद्यालय ने चेन्नई से 60 किलोमीटर दूर तिरुवल्लुर में ग्रामीण बच्चों के एक निःशुल्क आवासीय विद्यालय में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर योग सत्र आयोजित किया। वहाँ की महिलाएँ नियमित योग सत्र जारी रखने के लिए बहुत उत्सुक थीं। शिविर का संचालन संन्यासी योगशरण द्वारा किया गया।

कार्यक्रम के बाद कई प्रतिभागियों ने अपने सुखद अनुभवों को सबके साथ साझा करना चाहा। तमिल सेल्वी आगे आयी और रोने लगी। अकेली माँ होने के नाते उसके जीवन में बहुत समस्याएँ हैं, पर उसकी बेटी ने ही, जो सेवालय स्कूल की तीसरी कक्षा में पढ़ती है, उसे योग सत्र में आने के लिए कहा। वह एक दर्जी है जो अपने हाथों और पैरों का बहुत अधिक उपयोग करती है और इसलिए उसे लगातार दर्द की शिकायत रहती है। हमारी परम्परा की पवनमुक्तासन शृंखला ने चमत्कारिक रूप से उसे राहत दिलाने में मदद की और मानस दर्शन के अभ्यास ने उसके स्वस्थ रहने के संकल्प को मजबूत किया।

एक युवा लड़की ने कभी नहीं सोचा था कि उसके कोई सपने या अरमान भी हैं। हमारे योग अभ्यासों ने उसके एक स्व-प्रेरित, नैतिक उद्यमी बनने के प्रसुप्त सपने को उजागर करने में मदद की और अभ्यास के दौरान वह एक उद्यमी के रूप में अपनी कल्पना भी करने लगी।

– संन्यासी योगशरण



- जारी परियोजनाओं में निम्नलिखित स्थानों में योग सत्र शामिल हैं –
- श्री अरुणादयम् चैरिटेबल ट्रस्ट में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए
 - चेन्नई के केंद्रीय कारागार में
 - इरोड में आदिवासी गाँव के बच्चों के साथ एक ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से
 - अन्ना विश्वविद्यालय के आदिपराशक्ति डेंटल कॉलेज तथा अग्रवाल विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए
 - तिरुनिन्द्रवुर गाँव में सेवालय एन.जी.ओ. के साथ ग्रामीण महिलाओं के लिए

चेन्नई नगरनिगम के कर्मचारियों और अधिकारियों के लिए आयोजित एक योग सत्र में मुझसे एक सज्जन ने संपर्क किया जिसने एक अच्छा-सा सफारी सूट पहना हुआ था। उसने नगरनिगम के एक बड़े विभाग के वरिष्ठ प्रबंधक के रूप में अपना परिचय दिया। उसने मुझसे पूछा कि क्या मैं बिहार योग परम्परा का वही योग शिक्षक हूँ। मैं उसकी बात समझ नहीं पाया। उसने कहा कि योग की विधियों ने उसे इस मुकाम तक पहुँचने में मदद की है, लेकिन वह यह नहीं बताना चाहता था कि हम पहले कहाँ मिले थे। बाद में उसने मुझे फोन किया और कहा कि पहले वह जेल में एक अपराधी था और नियमित रूप से हमारे जेल के योग सत्रों में भाग लेता था। ध्यान और योग निद्रा के दौरान आरोपित संकल्प ही वह कारण था जिसने उसे अपने जीवन को नये सिरे से शुरू करने में मदद की। यह मेरे लिए एक विशेष क्षण रहा।

– संन्यासी योगशरण

ज्ञानयोग की सप्त भूमिकाएँ

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

विद्या को समझने, ग्रहण करने और जीवन के व्यवहारिक धरातल पर उसे उतारने के लिए भूमि तैयार करने की आवश्यकता होती है। सही आधार या तैयारी के बिना वह विद्या नहीं रहती, बल्कि मात्र एक आरोपित मान्यता होती है, जिसे शास्त्रों में 'मल' की संज्ञा दी जाती है। यह तभी विद्या कहलाती है जब यह आपके मन पर बाहर से आरोपित न होकर आपके मन में उसी तरह प्रवेश करती है जैसे स्पंज जल को सोख लेता है।

स्पंज को जल में डुबाने पर वह जल से पूरी तरह भर जाता है। उसका कोई भाग सूखा नहीं रहता, जल स्पंज का अभिन्न अंग बन जाता है, उसकी अपनी कोई अलग पहचान नहीं रह जाती। ज्ञानयोग में मन की स्पंज जैसी क्षमता तीसरी भूमिका, तनुमानसा के स्तर पर आती है, जबकि पूर्व की दो भूमिकाएँ इसके लिए भूमि तैयार करती हैं।

भूमि की तैयारी

ज्ञानयोग की प्रथम भूमिका 'शुभेच्छा' मन में सकारात्मक संकल्प का निर्माण करती है। भले ही यह छोटी-सी शुरुआत है, लेकिन यह आपकी सजगता का विकास कर आपको उन छोटे-से-छोटे उपद्रवों के प्रति जागरूक बनाती है जो आपके मन की शांति एवं समरसता को भंग कर देते हैं।

मन रूपी फर्श पर पड़ी किसी भी तरह की गंदगी को दूर करने की इच्छा ज्ञानयोग की प्रथम भूमिका है। आपकी यह इच्छा कि आप अपने कमरे को पूर्णतया स्वच्छ रखेंगे, उसमें एक भी धूल का कण, कागज का टुकड़ा या किसी प्रकार की गंदगी नहीं रहने देंगे, आपकी शुभेच्छा है। सकारात्मक इच्छा के साथ-साथ उसके अनुरूप प्रयास भी होना चाहिए। शुभेच्छा से आप शुरुआत करते हैं और उस पर कायम रहने से आंतरिक मलों एवं विकारों के नकारात्मक आवेग कम होते हैं। फिर किसी एक चीज का चयन कर उस पर गहन चिंतन करना ज्ञानयोग की दूसरी भूमिका, 'विचारणा' है।

विचारणा की स्थिति में आप तभी प्रवेश कर सकते हैं जब आपने स्वयं को शुभेच्छा के प्रथम स्तर पर स्थापित कर लिया हो। शुभेच्छा का आधार



मजबूत होने पर विचारणा की प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से प्रारम्भ हो जाती है, क्योंकि अब आपके पास एक सकारात्मक मन है जो अवलोकन और विश्लेषण कर सकता है, विचारों को ग्रहण या उनका निष्कासन कर सकता है। अब आप किसी विशिष्ट वस्तु या परिस्थिति का सही मूल्यांकन कर सकते हैं। शुभेच्छा से मन की सकारात्मक शक्तियाँ सक्रिय हो जाती हैं, जिनसे आप किसी समस्या को पहचान कर उसका कारण खोज सकते हैं।

वयस्क होने के नाते आप हर चीज के पीछे कोई-न-कोई कारण अवश्य खोजते हैं। क्या आप बिना किसी कारण के प्रसन्न रह सकते हैं? नहीं। प्रसन्न होने के लिए आप हमेशा कोई-न-कोई कारण खोजते हैं। कारण का अभाव हो तो फिर आप अप्रसन्न ही रहते हैं क्योंकि ऐसा कुछ होता ही नहीं जिसे आप प्रसन्नता से जोड़ सकें। कमी कहाँ पर है? यह कमी आपके मन में है जो

प्रसन्नता को एक स्वाभाविक, निरन्तर अवस्था के रूप में नहीं पहचानता, बल्कि इसे किसी-न-किसी कारण से जोड़ता है – ‘अगर ऐसा हो तो मैं खुश हो जाऊँगा; यदि इसे पा लूँ तो प्रसन्न हो जाऊँगा।’ आप प्रसन्नता के विचार और अनुभव को क्षुद्र वस्तुओं और कारणों से जोड़ देते हैं।

समस्या के कारण की खोज विचारणा में होती है। आप अपनी अभिव्यक्ति का वास्तविक कारण पहचान लेते हैं जो आपके मन के भीतर छिपे हुए षट् रिपुओं में से ही एक है। इसके विषय में आप सभी जानते हैं, कुछ भी नया नहीं है। आपको तो सिर्फ यह पहचानना है कि अमुक विचार षट् रिपुओं में से किसकी देन है। क्या यह काम से उपजा है, या फिर क्रोध, मद, मोह, लोभ या मात्सर्य से?

जब आप कारण की खोज कर लेते हैं, समस्या के उद्गम को पहचान लेते हैं तब फिर क्या आप उस कारण को अनुभव से अलग कर सकते हैं? आपका यह अलगाव आपको सकारात्मक होने में सहायता प्रदान करता है। यह आपको उस समस्या के दुष्परिणामों से बाहर निकलने में मदद करता है और इसके बाद आप स्वयं को सकारात्मकता से जोड़ सकते हैं। सकारात्मकता की स्थिति भले ही आप प्राप्त न कर सकें, फिर भी तटस्थ तो बन सकते हैं, द्रष्टा तो बन सकते हैं। नकारात्मक कारण से जुड़े रहने पर आप उससे तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं, लेकिन द्रष्टा की स्थिति में वह सम्बंध नहीं बनता और आप तटस्थ रहते हैं। भले ही आप विचारों की एक शृंखला का अनुसरण कर रहे हैं कि ‘आज इस व्यक्ति ने मुझे परेशान और उत्तेजित किया, मुझसे झगड़ा किया, मैं इसी कारण से तनाव में हूँ, मुझे यह समस्या है, मुझे वह तकलीफ है, उसने मुझसे ऐसा कहा, जिसने मुझे चोट पहुँचायी,’ – विषय कुछ भी हो, आप उसका मूल कारण खोजिये। देखिये कि उसके परिणामस्वरूप आप के भीतर कौन-सा अनुभव, किस प्रकार की प्रतिक्रियाएँ विकसित हो रही हैं। कारण एक होने पर भी विभिन्न प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। इस प्रकार षट् रिपुओं को पहचानकर तथा उनके साथ अपने विचारों के सम्बंधों को समझकर उनसे मुक्त होना ही विचारणा की प्रक्रिया है।

ज्ञानयोग की तृतीय भूमिका – तनुमानसा

विचारणा में आपने अपनी अशांति के कारणों की खोज मन के अंदर छिपे षट् रिपुओं में की, अब इस अध्याय को समाप्त करते हुए आप आगे के स्तर की

ओर बढ़ते हैं। यह तनुमानसा है, ज्ञानयोग की तृतीय भूमिका, जहाँ आपका चिंतन इतना गहरा हो जाता है कि आप महत् के सूक्ष्म स्तरों तथा अनुभवों को समझने लगते हैं।

महत् या अंतःकरण में मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार, इन चारों का समावेश होता है। विषय को समझने के लिए यह भी कहा जा सकता है कि इन्द्रियों एवं इन्द्रिय-विषयों में विचरण करने वाला और षट् रिपुओं के प्रभाव में रहने वाला पक्ष मन है, जबकि महत् का कार्यक्षेत्र आपका बाह्य और आन्तरिक जीवन दोनों है। महत् का सम्बन्ध बाहरी संसार के साथ क्रिया-कलापों से भी है और साथ ही आपके आन्तरिक आध्यात्मिक आयाम से भी है, जबकि काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ एवं मात्सर्य रूपी षट् रिपु केवल बाह्य संसार से सम्बन्ध रखते हैं, आध्यात्मिक अनुभवों की परिधि तक उनकी पहुँच नहीं।

महत् की शुद्धि

जैसे-जैसे आप तनुमानसा में आगे बढ़ते हैं, वैसे-वैसे आप महत् के विभिन्न घटकों के प्रभावों के प्रति सजग होते जाते हैं। आप देखने लगते हैं कि किसी विशेष घटना या परिस्थिति का मन और बुद्धि पर क्या प्रभाव पड़ा है, चित्त पर क्या असर हुआ है, कौन-सी सम्बंधित स्मृतियाँ उठने लगी हैं, अहंकार से घटना का क्या सम्बंध है। पहले आप मनस् के स्तर से अपना कार्य शुरू करते हैं – ‘क्या मन ने इस घटना का गलत विश्लेषण किया है? क्या मेरा आकलन सही नहीं था? मैंने कहाँ पर गलती की? अपने बच्चे को अलग कमरे में बंद करने के बदले मैं उसे एक टॉफी देकर शांत करा सकता था। क्या मैं परिस्थिति को सुधार सकता था? क्या मैं नकारात्मकता से बच सकता था?’ ये सब मनस् के स्तर के चिंतन और विश्लेषण हैं।

अब आप उसी परिस्थिति के सम्बंध में अपनी बुद्धि के स्तर पर कार्य करना शुरू करते हैं और स्वयं से प्रश्न करते हैं, ‘क्या मेरी बुद्धि ने गलत निर्णय लिया है? क्या मेरी बुद्धि ने समझदारी और विवेक से काम नहीं लिया? हो सकता है कि यह मेरी बुद्धि की विफलता हो।’ यह संभव है कि किसी परिस्थिति में मनस् का दोष न हो, बल्कि विवेक के अभाव में बुद्धि विफल हो गयी हो।

इसी प्रकार आप चित्त के स्तर पर कार्य करते हैं। उस घटना से सम्बंधित सभी स्मृतियों को द्रष्टा भाव से देखकर उनके निष्कासन का उपाय खोजते हैं।

मनस्, बुद्धि एवं चित्त का शुद्धिकरण होने से अहंकार कमजोर और हल्का हो जाता है, उसका स्वरूप तामसिक से सात्त्विक हो जाता है।

गुणों का व्यवस्थीकरण

तनुमानसा में मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार के अवलोकन के पश्चात् तीन गुणों पर ध्यान दिया जाता है। कोई भी घटना या परिस्थिति तमोगुण, रजोगुण या सत्त्वगुण में से किसको जागृत कर रही है? दिल और दिमाग पर उसका क्या प्रभाव पड़ रहा है? दिल और दिमाग में इन गुणों के रंगों को देखिये। अगर यह तमस् का काला रंग है तो उसे देखिये, पर फिर उससे बाहर आ जाइये। अपने हृदय और मन से उसका प्रभाव मिटा दीजिये। अगर वह राजसिक रंग है तो उसे भी देखिये। रजस् के लाल रंग को देखकर उसे भी साफ कर दीजिए, रजोगुण के प्रभाव को हटा दीजिये। अगर सत्त्वगुण प्रबल है और उससे आप आनंद एवं उत्साह से भर उठे हैं तो फिर उसका संवर्धन कीजिये। इस प्रकार तनुमानसा के दूसरे स्तर पर आप तीनों गुण का अवलोकन कर उन्हें शुद्ध करते हैं।



एक बार आप गुणों के स्तर पर काम करना प्रारम्भ करते हैं तो आपको एक और जरूरत महसूस होने लगती है – मन को सभी प्रभावों से मुक्त करने की। हमलोग बहुत जल्दी दूसरों के कथनों से प्रभावित हो जाते हैं। अगर आपको कोई अच्छा-सा अनुभव होता है और आप इसके बारे में अपने दोस्त को बताते हो, जिसे सुनकर वह कहता है, ‘वाह! बहुत खूब! तुम कितने भाग्यशाली हो,’ तो यह छोटा-सा प्रशंसा भरा वाक्य भी आपके दिमाग पर एक छाप छोड़ जाता है।

अगर कोई व्यक्ति आपके बारे में कुछ गलत कहता है तो आप उसे अस्वीकार ही करेंगे, उसका वह गलत कथन आप पर कोई विशेष छाप नहीं छोड़ेगा। आप सोचेंगे, ‘इस व्यक्ति पर ध्यान नहीं देना चाहिए, वह ऐसा इसलिए कह रहा है कि उसे मालूम नहीं कि मैंने क्या कर दिखाया है।’ लेकिन प्रशंसा भारी बातों का आप पर ज्यादा प्रभाव पड़ेगा क्योंकि आपके अहंकार को बढ़ावा मिलेगा। यहाँ आपको सावधान रहना होगा ताकि निंदा मिले या प्रशंसा, वह त्रिगुणों में अशांति और विक्षोभ उत्पन्न न कर सके और आप ऐसे कथनों पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त न करें।

इस सम्बंध में महात्मा बुद्ध के जीवन की एक घटना याद आती है। एक व्यक्ति उनके समक्ष खड़ा होकर अनाप-शनाप गालियाँ देने लगा। अपना समस्त क्रोध उड़ेल देने के बाद जब उसका गला रुंध गया, तभी वह शांत हुआ। अब बुद्ध की बारी थी। उन्होंने उस व्यक्ति से एक प्रश्न किया, ‘तुम अगर किसी के घर पर अतिथि के रूप में कोई उपहार लेकर जाते हो और वह व्यक्ति उपहार अस्वीकार कर दे तो तुम क्या करोगे?’ उसने उत्तर दिया, ‘मैं उस उपहार को वापस ले लूँगा।’ तब बुद्ध ने उससे कहा, ‘बिल्कुल सही, और इसलिए अभी जो उपहार तुमने मुझे दिया है उसे मैं तुम्हें लौटा रहा हूँ। इसे वापस ले लो।’

बुद्ध चाहते तो सामान्य लोगों की तरह व्यवहार भी कर सकते थे। वे भी क्रोध में आकर मार-पीट के लिए तैयार हो सकते थे। ऐसा करने से कौन-सा गुण प्रबल होता? रजोगुण। परंतु उन्होंने ऐसा न करके शांति और समता बनाये रखी, और इस तरह सत्त्वगुण को ही प्रबल किया। इसी प्रकार यदि आप भी अपना संतुलन कायम रख सकें तो आप अपने भीतर त्रिगुणों की प्रतिक्रियाएँ देख सकते हैं और उन्हें हृदय में क्षोभ उत्पन्न करने का अवसर न देकर, कठिन-से-कठिन परिस्थिति में भी प्रसन्नता की अवस्था बनाये रख सकते हैं। अगर आप ऐसा कर सकें तो आपके दुःख-दर्द वैसे ही पचहत्तर प्रतिशत कम हो जायेंगे।



इसलिए केवल अन्य व्यक्तियों के प्रभाव का ही नहीं, बल्कि अपनी निम्न वृत्तियों के प्रभाव का भी हमें सजगतापूर्वक अवलोकन करते रहना चाहिए। ये हानिकारक वृत्तियाँ मन की सतह पर तो दिखलायी नहीं पड़तीं, परंतु गहराई में छिपी रहकर हमारे जीवन में उथल-पुथल लाती रहती हैं। बाहरी प्रभावों, आंतरिक अनुभवों तथा उन अनुभवों के प्रभावों का अवलोकन कर हमें उन्हें संतुलित करना होगा, व्यवस्थित करना होगा।

संस्कारों एवं प्रज्ञा के क्षेत्र में प्रवेश

तनुमानसा की भूमिका में स्वयं को स्थापित कर लेने पर आप विज्ञानमय कोष में प्रवेश करते हैं, जहाँ आप अपने संस्कारों, वासनाओं एवं महत्त्वाकांक्षाओं का अवलोकन और विश्लेषण प्रारम्भ करते हैं। ये आपके संस्कार ही हैं जो आपको अलग-अलग कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। आप किसी होटल में जाकर कुछ खाना चाहते हैं तो यह आपका संस्कार है। आप अकेले रहना पसन्द करते हैं या संगीत सुनने का शौक रखते हैं या चित्रकारी में अपना समय बिताते हैं, ये सभी आपके संस्कार हैं। आपकी रुचियाँ, आदतें, विचार – सभी संस्कारों की आन्तरिक स्फुरणा से उत्पन्न होते हैं। इनका अवलोकन और विश्लेषण आवश्यक है।

जब आप अपने संस्कारों का अवलोकन करते जाते हैं तो इस गहन आत्म-सजगता एवं आत्म-विश्लेषण के परिणामस्वरूप आपकी अन्तर्प्रज्ञा विकसित होना प्रारम्भ हो जाती है। अब आपका मन तामसिकता की सीमाओं को, तथा इंद्रियों तथा उनके विषयों के बन्धनों को तोड़ने लगता है। बाहरी संसार के संग से उत्पन्न अशुद्धियों का निष्कासन होने लगता है और आपका मन पवित्र होते जाता है।

जैसे-जैसे आपकी प्रज्ञा विकसित होती जाती है वह आपकी मूल प्रवृत्तियों की तरह आपकी स्वाभाविक जीवनशैली का अंग बनते जाती है। जब मूल प्रवृत्तियाँ सक्रिय होती हैं तब सोच-विचार के लिए स्थान नहीं रहता, और मूल प्रवृत्तियाँ हमेशा आत्मसुरक्षा के लिए ही होती हैं। इसी प्रकार अन्तर्प्रज्ञा का लक्ष्य हमेशा उच्च ज्ञान से जुड़ना होता है। मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार की अशुद्धियों के कम होते ही ज्ञान-गंगा सहज रूप से प्रवाहित होने लगती है, और अन्तर्प्रज्ञा एक जीवन्त अनुभूति बन जाती है।

यह अंतर्प्रज्ञा स्वयं को तनुमानसा की अवस्था में स्थापित करने का ही प्रभाव है। इसके फलस्वरूप जीवन में सम्यकता आ जाती है, आपके विचार, आपके कर्म – सब कुछ उपयुक्त तरीके से होने लगते हैं। बहुत-से लोग जो श्री स्वामीजी से मिले हैं, उनकी दोषरहित प्रज्ञात्मक समझ और ज्ञान के साक्षी रहे हैं। यह तनुमानसा की स्थिति है, जहाँ मन स्पष्ट एवं पवित्र हो जाता है।

सतत् प्रयास की आवश्यकता

यह याद रखिए कि तनुमानसा की स्थिति प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी आप वहाँ से फिसल सकते हैं और मन की निम्न वृत्तियों के प्रभाव में आ सकते हैं। सतत्, निरन्तर प्रयास के अभाव में ही ऐसा होता है और आप पुनः षट् रिपुओं के माया जाल में फँसकर विषयासक्त हो जाते हैं। ऐसी स्थिति आने पर आपको पुनः सजगता एवं संकल्पशक्ति को जागृत करना होगा।

आप दृढ़ संकल्पशक्ति के बल पर ही ज्ञानयोग की यात्रा पूर्ण कर सकेंगे। इसके बिना ज्ञानयोग की साधना कभी सफल नहीं होने वाली है, वह सिर्फ बुद्धिविलास बनकर रह जायेगी। इसलिए आपको अपनी ज्ञानयोग की यात्रा के हर स्तर पर अपनी दृढ़ संकल्पशक्ति एवं द्रष्टा-भाव को उपयोग में लाना होगा।

आवरण से बाहर निकलना

ज्ञानयोग की प्रारम्भिक तीन भूमिकाएँ आपके प्रयासों पर निर्भर हैं और अंतिम चार भूमिकाएँ इन प्रयासों के परिणाम हैं। ये चार भूमिकाएँ क्रमशः 'सत्त्वापत्ति' अर्थात् आत्म-प्रकाश की स्थिति, 'असंसक्ति' अर्थात् अनासक्त भाव, 'पदार्थ अभावना' अर्थात् भौतिक पदार्थों से विरक्ति और 'तुर्यगा' अर्थात् तुरीयावस्था कहलाती हैं। तुर्यगा ज्ञानयोग की अंतिम अवस्था है, जहाँ व्यक्ति की चेतना सांसारिक आयाम से हटकर उच्च आध्यात्मिक आयाम में अवस्थित हो

जाती है। चेतना के निम्न तीन आयामों से चतुर्थ आयाम तक की यात्रा को ही तुर्यगा के नाम से जाना जाता है।

ज्ञानयोग के प्रारम्भिक तीन स्तरों के प्रयासों में शुभेच्छा एक बहुत लघु प्रयास है, मानो प्रकाश के एक छोटे-से बिन्दु की तरह। यह ज्ञानयोग की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले प्रयास का दस प्रतिशत है। विचारणा का अगला स्तर थोड़ा बड़ा प्रयास है, सम्पूर्ण प्रयास का बीस प्रतिशत। ज्ञानयोग का शेष सत्तर प्रतिशत प्रयास तनुमानसा में होता है जिसका कार्यक्षेत्र सूक्ष्म मन है। प्रथम भूमिका में सजगता और सत्संकल्प का विकास होता है। दूसरी भूमिका में षट् रिपुओं के प्रभावों पर चिंतन और स्वयं को द्रष्टा-भाव में स्थापित करने का प्रयास होता है। तीसरी भूमिका में मनस्, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार का अवलोकन एवं शुद्धिकरण होता है, फिर तीनों गुणों और उनके सभी अच्छे एवं बुरे प्रभावों से मुक्त होने का प्रयास किया जाता है। तनु का मतलब सूक्ष्म है और इस प्रकार तनुमानसा का तात्पर्य यह कि आप सम्पूर्ण सूक्ष्म मन को साफ करके शुद्ध और निर्मल बना रहे हैं ताकि आप प्रज्ञा एवं विशुद्ध चेतना के आयाम में स्थापित हो सकें। अगली चार भूमिकाएँ इन तीनों भूमिकाओं को सिद्ध कर लेने का परिणाम हैं, उपलब्धियाँ हैं, उनका प्रसाद हैं।

क्या आप अब यह समझ पा रहे हैं कि ज्ञानयोग स्वयं से पश्र करना मात्र न होकर इससे कहीं अधिक गहन विषय है? इसका संबंध स्वयं को शुद्ध करने, स्वयं को जानने-समझने और स्वयं को सर्वोच्च अवस्था तक ले जाने से है। प्रथम तीन अवस्थाएँ अगर ज्ञानयोग का राजमार्ग हैं तो अंतिम चार अवस्थाएँ इसका गंतव्य। लेकिन यह गंतव्य किसी उपाधि की तरह नहीं है, बल्कि यह आंतरिक रूपान्तरण को दर्शाता है।

एक बीज की क्या उपलब्धि होती है? वृक्ष बन जाना? नहीं, वह तो उसकी नियति है। बीज की उपलब्धि तो अपने कड़े आवरण से बाहर निकलना है। यही बीज की अंतिम उपलब्धि है, इसके आगे की प्रक्रिया तो प्रकृति अपने हाथ में ले लेती है। इसी तरह आपको भी अपने कठोर आवरण से बाहर निकलने का प्रयास करना है, एक ऐसे तरीके से जो हानिकारक न हो, बल्कि स्पष्ट दृष्टिकोण, आशा और प्रेरणा प्रदान करता हो। ऐसा होने पर निश्चित रूप से बीज में निहित सभी अच्छे तत्त्व संघटित होकर एक सुन्दर पौधे के रूप में प्रस्फुटित होंगे। आपके प्रयासों का यही ध्येय और लक्ष्य होना चाहिए।

— 06 नवम्बर 2015, गंगा दर्शन

उत्तर प्रदेश



28 सितम्बर से 3 अक्टूबर 2023 तक सामुदायिक केंद्र, वसुंधरा, गाज़ियाबाद में पाँच दिवसीय योग प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया। प्रायः सभी प्रतिभागियों के लिए यह बिहार योग परंपरा का पहला परिचय था। इससे पहले योग के बारे में उनके विचार बीमारियों के इलाज या वजन घटाने तक ही सीमित थे। योग प्रशिक्षण में मंत्रोच्चारण को शामिल करना सभी के लिए आश्चर्य की बात थी और शुरू में उन्हें थोड़ी हिचकिचाहट भी हुई। जैसे-जैसे शिविर आगे बढ़ा, प्रतिभागी हवन और समीक्षा ध्यान के प्रति भी उत्सुक हो गये। शिविर के दूसरे दिन, जो शनिवार था, महामृत्युंजय हवन किया गया। हवन के बाद सभी ने महामृत्युंजय हवन को एक सामुदायिक आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में हर दूसरे शनिवार को जारी रखने का निर्णय लिया। यह शिविर प्रतिभागियों के साथ-साथ, दोनों शिक्षकों, हंसा और मुक्तिनाथ के लिए भी बहुत संतोषजनक अनुभव था।

अनुभव

मंत्र जप से मुझे मानसिक शक्ति मिली, आसन से मेरा शरीर हल्का हुआ, प्राणायाम ने मेरी आत्मा का स्पर्श किया और शिथिलीकरण बहुत प्रभावी रहा। दिवस की समीक्षा के अभ्यास ने मुझे अपने मनोविज्ञान की स्पष्ट समझ दी और मुझे अपने सामर्थ्यों के बारे में पता चला।

– गिरीश

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. सामान्य दान

जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. मूलधन निधि के लिए दान

बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए।
मूलधन निधि से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. सी.एस.आर. दान

जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – <https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965>

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट या योग रिसर्च फाउण्डेशन के नाम से हो और मुंोर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

प्राण एवं प्राणायाम

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 346, ISBN: 978-93-81620-34-2

यह पुस्तक हमें प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित एवं सत्यानन्द योग परम्परा के अन्तर्गत सिखाए जाने वाले प्राणायाम विज्ञान के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है। पुस्तक के प्रथम भाग में प्राण के सिद्धान्त एवं इससे सम्बन्धित यौगिक विचारधाराओं का वर्णन है। दूसरे भाग में श्वसन-तन्त्र एवं विभिन्न प्राणायामों पर किए गये आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोगों के बारे में बताया गया है। अभ्यास खण्ड में साधकों का विशेष मार्गदर्शन करते हुए प्राणायाम के विभिन्न अभ्यासों का सविस्तार वर्णन किया गया है।



उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 9162783904, 9835892831

☑ जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा



वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में satyamyogaprasad.net वेबसाइट पर तथा Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए) एवं कार्यक्रम

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- Bihar Yoga एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- For Frontline Heroes एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं
- स्वस्थ जीवन हेतु biharyoga.net तथा satyamyogaprasad.net पर यौगिक जीवनशैली साधना का कार्यक्रम उपलब्ध है

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2024–2025

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

| | |
|-------------------------|---|
| नवम्बर 3–10 | क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण |
| जनवरी–दिसम्बर | आश्रम जीवन प्रशिक्षण |
| फरवरी 8–14 | पूर्ण स्वास्थ्य कैम्पूल (हिन्दी) |
| मार्च 3–9 | प्राणायाम – स्वस्थ जीवन के लिए श्वसन प्रशिक्षण (हिन्दी) |
| मार्च 22–28 | प्रत्याहार एवं धारणा प्रशिक्षण |
| सितम्बर 22–30 | राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण |
| अक्टूबर 3–11 | हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण |
| नवम्बर 1–15 | प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण |
| नवम्बर 16–जनवरी 30 2026 | संन्यास अनुभव (राष्ट्रीय/अन्तरराष्ट्रीय साधकों के लिए) |

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

| | |
|---------------------|-----------------------------------|
| मार्च 1–अप्रैल 30 | द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी) |
| नवम्बर 1–दिसम्बर 31 | द्विमासिक यौगिक अध्ययन (अंग्रेजी) |

कार्यक्रम

| | |
|-------------------|--|
| जनवरी 28– फरवरी 2 | बसंत पंचमी महोत्सव तथा बिहार योग विद्यालय का स्थापना दिवस |
| जून 25–जुलाई 9 | वेद पारायण |

मासिक कार्यक्रम

| | |
|---------------------------|-----------------------|
| प्रत्येक शनिवार | महामृत्युंजय हवन |
| प्रत्येक एकादशी | भगवद् गीता पाठ |
| प्रत्येक पूर्णिमा | सुन्दरकाण्ड पाठ |
| प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख | गुरु भक्ति योग |
| प्रत्येक 12 तारीख | अखण्ड रामचरितमानस पाठ |